Digitized by eGangotri

सच्ची कहानियां

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

सच्ची कहानियां

[ऐतिहासिक घटनाओं पर आधारित प्रेरणाप्रद कहानियां]

Sachi kahaniya

लेखक

के० डी० ठक्कर K.D.Thakkar

आचार्य

श्री गोकुलदास तेजपाल विद्यालय, बम्बई

तथा

रामनारायण तिवारी

स्कैन्ड/Scanned

राजपाल एण्ड सन्ज़, दिल्ली

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

दो शब्द

साहित्य में आग की वह चिनगारी अवश्य होनी चाहिए जिससे पाठकों के दिमाग में सत्य का प्रकाश पैदा हो। विशेषकर बच्चों के लिए प्रस्तुत साहित्य में तो इस शक्ति का होना अत्यन्त आवश्यक है। मनोरंजन हमारे लिए आवश्यक है, लेकिन यदि मनोरंजन से चरित्र-निर्माण भी हो सके तब तो सोने में सुहागा। कहानियों में मनोरंजन और चरित्र-निर्माण बहुत सुन्दरता से साथ-साथ प्रवाहित हो सकता है। बालोपयोगी कहानियों में यदि यह गुण न हुआ तब तो वे ठीक उस भोजन के समान होंगी जिसमें स्वाद तो खूब हो परन्तु पौष्टिक तत्त्व के नाम पर ठनठन गोपाल।

इस कहानी-संग्रह में यह ध्यान विशेष रूप से रखा गया है कि हर कहानी बच्चों का मनोरंजन करते-करते कुछ दे जाए। इन कहानियों का आधार ऐतिहासिक है। इससे पाठकों को थोड़ी-सी ऐतिहासिक जानकारी भी प्राप्त हो सकेगी। महापुरुषों का जीवन ही एक कहानी है। उनके जीवन में ऐसी बातें आती हैं जो हमें असम्भव-सी जान पड़ती हैं। लेकिन वे कुछ ऐसा काम कर सके जो असम्भव था, तभी तो वे असाधारण थे; तभी तो वे महान बन सके। उनके जीवन की हर घटना हमारे लिए प्रेरणादायक है।

इन कहानियों में कुछ ऐसी भी घटनाएं हैं जो किताबों में न लिखी होने पर भी लोगों की ज़बान पर पली हैं। यह जनश्रुति भी पूर्णतः असत्य तो नहीं ही हो सकती। भारत के इतिहास को जानने के लिए इन जनश्रुतियों की उपेक्षा करना उचित न होगा। अतः 'सच्ची कहानियां' की प्रत्येक कहानी सच्ची है और एक सत्य की भावना को छिपाए है। हमें आशा है कि ये कहानियां पाठकों के सामने एक सत्य एवं एक मानवीय भाव का प्रदर्शन कर सकेंगी।

ऐतिहासिक घटनाएं तो किसी न किसी ग्रंथ से ही प्राप्त हो सकती हैं। अतः जिन लेखकों की कलम ने हमें प्रेरणा के लिए थोड़ी-बहुत सामग्री उपलब्ध की, हम उनके प्रति आभारी हैं तथा उनका मूक अभिवादन करते हैं।

—लेखक

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

क्रम

सच्ची विजय	५
कुसंग का फल	१२
पिता का वचन और मित्र का ऋण	१८
अद्भुत गुरु-भक्ति	२५
ज्ञान की प्यास	३१
अधिकार किसका ?	४०
प्रेम का मूल्य	४९
बलिदान	५४
सच्ची सेवा	५८
पतन का रास्ता	६४
न्याय	६९
बिदाई	७६

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

सच्ची विजय

* * * * * *

अरावली पर्वत चारों तरफ से घिर गया था। जिधर देखो उधर मुगल सिपाही ही नज़र आते थे। इस बार का युद्ध साधारण नहीं था। मुगल सेना महाराणा प्रताप को जीते-जी पकड़ लेना चाहती थी। दिन-भर 'मारो-मारो, यह गया, वह गया, बचने न पाए' का ही शब्द सुनाई देता था। 'अल्ला हो अकबर' की घनघोर आवाज़ करते हुए मुगल सेना आगे बढ़ती जा रही थी। पहाड़ी चारों तरफ से घेर ली गई थी। मुगलों ने सोचा था कि प्रताप अब कहां बचकर जाएंगे। लेकिन अरावली पहाड़ में छिपी राणा प्रताप की सेना को हरा देना कोई हंसी-खेल न था। राजपूती सेना धीरे से एक तरफ से 'हर हर महादेव' करती टूट पड़ती थी। जैसे बादल गड़गड़ाता है और बिजली चमक उठती है, उसी तरह हुंकार भरती हुई राजपूती सेना की तलवारें चमकने लगती थीं। यह मारा, वह मारा, और

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

निकल गए। बात की बात में मुगल सेना के अनेक सिपाही ज़मीन पर लोटते नज़र आते और ख़ून की धारा बह उठती।

राजपूतों के दिल में देशभक्ति थी और थी सच्चे त्याग और बलिदान की भावना। उन्हें हरा देना आसान काम नहीं था। बड़ी आशा से और अरमान से मिरज़ा खानखाना साहब आए थे। उन्हें अपनी तलवार पर भरोसा था और अपनी विशाल सेना पर नाज़ था। उन्होंने सोचा था कि राणा प्रताप के मुट्ठी-भर सैनिक उनके आगे क्या टिक सकेंगे ? लेकिन मुगल सेना के सैनिकों को पैसे से प्रेम था। वे बादशाह के नौकर थे। वे इसलिए लड़ रहे थे कि इससे उनको तनख़्वाह मिलेगी, उच्च पदवी मिलेगी। परन्तु राणा के सैनिकों में सच्चा जोश था। वे इसलिए लड़ रहे थे कि उन्हें आज़ादी पसन्द थी, इज़्ज़त प्यारी थी, अपना राजा प्यारा था और अपनी मातृभूमि प्यारी थी। फिर उनको कोई कैसे दबा सकता था ! युद्ध कई महीनों तक चलता रहा। महाराणा उसका सफल संचालन करते रहे। उनकी बूढ़ी नसों में अब भी जवानी का ख़ून था। उन्हें देखकर उनके सैनिकों का उत्साह बढ़ जाता था। वे अपने प्यारे राणा पर अपना जीवन लुटा देने के लिए हर समय तैयार थे।

आज की लड़ाई तो और भयंकर थी। लगता था कि साक्षात् प्रलय उतर आया है। तलवारें चम-चम चमक रही

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

थीं। भाले उछलकर नौजवानों के सीने में घुस रहे थे। गर्म ख़ून के फव्वारे छूट रहे थे। तोपें गड़गड़ा रही थीं। मैदान लाशों से पटा जा रहा था। आज अन्तिम बाज़ी लगी थी। मिरज़ा खानखाना स्वयं अपने सैनिकों को ललकार रहे थे। उनके अनुभवी हाथों में तलवार अपना रंग दिखा रही थी। इधर राजपूती सेना का संचालन आज महाराणा के पुत्र अमरसिंह के हाथ में था। अपने राजकुमार के साथ सैनिकों का उत्साह बढ़ गया था। वे जी खोलकर लड़ रहे थे। बाज की तरह वे मुगलों पर टूट पड़ते थे। लगता था, आज कुछ न कुछ होकर रहेगा। दोनों ही सेनाओं का जोश बढ़ रहा था। राजपूत एक बार थोड़ा पीछे हटे और फिर ललकारकर उन्होंने ऐसा भयंकर वार किया कि मुगल सेना में भगदड़ मच गई। जिसे जिधर जगह मिली, वह उधर ही भागा। किसे किसका ख्याल था। अपना ही जीवन बचाना मुश्किल था, फिर दूसरों का ख्याल कौन करता! बात की बात में मैदान का वह कोना खाली हो गया। इसी तरफ मिरज़ा साहब की बेगम और दूसरे सरदारों की बीवियां खेमे में रुकी थीं। राजपूतों ने उन्हें बन्दी बना लिया। उनके हर्ष का ठिकाना न था। आज वे बड़े आनन्द से लौटे।

शाम हो गई थी। महाराणा एक स्वच्छ शिला पर बैठे थे। पास ही उनकी झोंपड़ी थी। उन्होंने सेना को लौटते देखा।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

सैनिकों की चाल को देखकर ही उन्होंने समझ लिया कि आज विजय अपने पक्ष की हुई है। देखते ही देखते राजकुमार अमरसिंह, भील सरदार तथा सैनिक वहां आ पहुंचे। सभी ने ज़ोर से नारा लगाया—"महाराणा की जय! चित्तौड़ अमर है!" राणा ने मुस्कराकर वीरों का स्वागत किया।

भील सरदार ने आगे बढ़कर महाराणा को प्रणाम किया। महाराणा ने उसे आशीर्वाद देते हुए कहा, "कहो वीर, आज का युद्ध कैसा रहा?"

भील सरदार ने स्वाभिमान से कहा, "महाराज, आज तो हमारे सैनिकों ने वह वीरता दिखाई जिसे कभी भुलाया नहीं जा सकता। मुगल सेना के छक्के छूट गए। अब तो हमारी विजय निश्चित है।"

"शाबाश वीरो, शाबाश! तुम्हें धन्यवाद है। तुमपर ही चित्तौड़ को गर्व है। परन्तु एक दिन की विजय से ही विजय निश्चित कैसे हो सकती है! हारी हुई मुगल सेना कल और तैयारी से लड़ने आएगी।" महाराणा ने गम्भीर होकर कहा।

"नहीं महाराज, आज तो एक ऐसी चीज़ हाथ लगी है कि मिरज़ा को मजबूर होकर हार माननी ही पड़ेगी।"

"वह क्या सरदार?"

"महाराज, आज युद्ध में मिरज़ा की बेगम और दूसरे सरदारों की पत्नियों को बन्दी बना लिया गया है। देखिए,

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

पालकी में वे सब आ रही हैं। हम इन्हें रोककर मिरज़ा को झुकने के लिए बाध्य करेंगे। अब युद्ध की क्या आवश्यकता !"

महाराणा कुछ क्षण के लिए गम्भीर हो गए। उनका चेहरा तमतमा उठा। कुछ रुककर वे बोले, "क्या कहा सरदार, औरतों को कष्ट देकर विजय ! नारी को सताकर विजय ! अबला की इज़्ज़त उतारकर विजय ! नहीं, नहीं सरदार ! ऐसा नहीं होगा। हरगिज़ नहीं होगा। आह, मैं राजपूतों की वीरता पर कलंक न लगने दूंगा। आर्यों की कीर्ति को नारी पर अत्याचार करके गन्दा न करूंगा। सरदार, उन औरतों को शीघ्र यहां ले आओ।"

अब तक पालकियां पहुंच चुकी थीं। महाराणा की आज्ञा पाकर उन्हें शीघ्र वहां उपस्थित किया गया। उन्होंने गंभीर स्वर में कहा, " देवियो, आप हमारी वन्दिनी नहीं, मेहमान हैं। आर्यजाति नारी का अपमान नहीं करती। हमारे लिए हर नारी पूज्य है। हमें झगड़ा किसीसे नहीं है। हम तो सिर्फ अपनी आज़ादी के लिए लड़ रहे हैं। हमारी दुश्मनी उनसे है जो हमारी आज़ादी छीनते हैं। आप निर्दोष महिलाएं हमारी बहिनें हैं। आपकी इज़्ज़त हमारी इज़्ज़त है। हमारे सरदारों ने आपको बंदी बनाया, इसके लिए मैं माफी मांगता हूं।

" सरदार ! राजकुमार ! ले जाओ इन्हें और इज़्ज़त से मिरज़ा साहब के पास पहुंचा दो। बेटा अमर, यह विजय का

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

रास्ता नहीं है। सरदार, अबलाओं को सताकर हम चित्तौड़ की वीरता पर कलंक नहीं लगा सकते। धर्म और सत्य को गिराकर विजय नहीं चाहिए। जाओ, इन्हें शीघ्र वापस भेजो।"

इधर मिरज़ा साहब के मन में आज महान दुःख था। हार

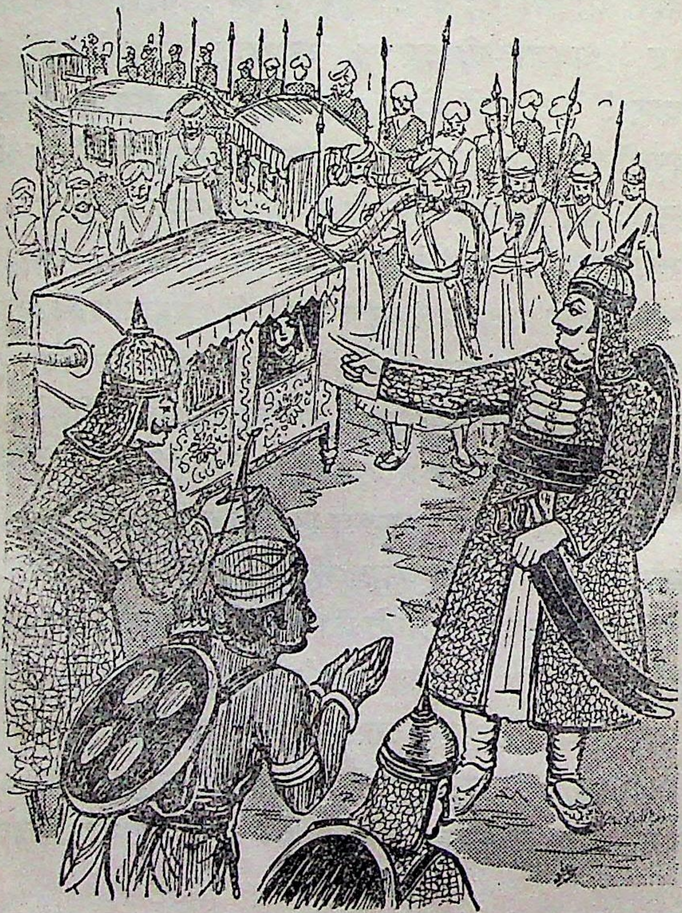

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

तो हुई ही और इज़्ज़त भी गई। सभी सरदार मुंह लटकाए बैठे थे। आज सभीका घर सूना था। उनका दिल बेचैन हो उठा था। वे आपस में कह रहे थे कि अब तो राजपूत हमारी औरतों को सताकर हमें तलवार रखने के लिए मजबूर कर देंगे। या अल्लाह! क्या किया जाए!

इसी समय खेमे के द्वार पर कुछ आहट हुई। सभी बाहर आ गए। लोगों ने देखा कि पालकी दरवाज़े पर रुकी है। सरदारों ने सोचा कि उनके सैनिकों ने ही उन्हें खोज निकाला है। वे एक स्वर से बोल उठे, "शाबाश वीरो! हम भी कहते थे कि मुगल सैनिकों के हाथ से मुगल औरतों को छीन लेना क्या खेल है! शाबाश वीरो, शाबाश! शुक्र है अल्लाह का!"

सहसा मिरज़ा साहब की बेगम आगे बढ़ीं। उन्होंने कहा, "रहने भी दीजिए मियां! पालकी के ये सैनिक राजपूत सैनिक हैं। महाराणा की आज्ञा से ये हमें यहां पहुंचाने आए हैं। आपके सैनिकों की वीरता तो देख ली।"

सभी का सिर नीचा हो गया। इसके बाद बेगम साहिबा ने सबको अपनी मुक्ति की कहानी सुनाई। उन्होंने कहा, "अहा! उस वीर के दर्शन कर मैं तो कृतार्थ हो गई। वास्तव में राणा प्रताप मनुष्य नहीं, देवता हैं देवता!"

मिरज़ा साहब पत्नी का मुंह देखने लगे। यह महाराणा की सच्ची विजय थी।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

कुसंग का फल

* * * * * *

स्कूल का निरीक्षण हो रहा था। इन्स्पेक्टर साहब आए थे। उन्होंने कुछ शब्द लिखने के लिए दिए थे। मास्टर साहब ने देखा कि मोहन गलत लिख रहा है। उन्होंने बहुत इशारा किया। मोहन को चुपचाप बताने की कोशिश की। ऐसे काम नहीं चला तो उन्होंने आगे वाले लड़के की स्लेट से नकल करने के लिए इशारा किया। मोहन का ध्यान उधर जाता ही न था। उसने गुरुजी के इशारों की तरफ ध्यान तक न दिया। मास्टर साहब क्रोधित हो रहे थे। इन्स्पेक्टर साहब के चले जाने के बाद उन्होंने मोहन को फटकारते हुए कहा, "तुम तो निरे बुद्धू हो। मैंने कितना इशारा किया लेकिन तुम गोबरगणेश क्यों समझने लगे!"

लड़के सब खूब हंसे। सबने मोहन को बेवकूफ बनाया, लेकिन बेचारे मोहन की समझ में कुछ न आया। गुरुजी रोज़ सच बोलने का उपदेश देते हैं, फिर आज ऐसी बातें क्यों कर

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

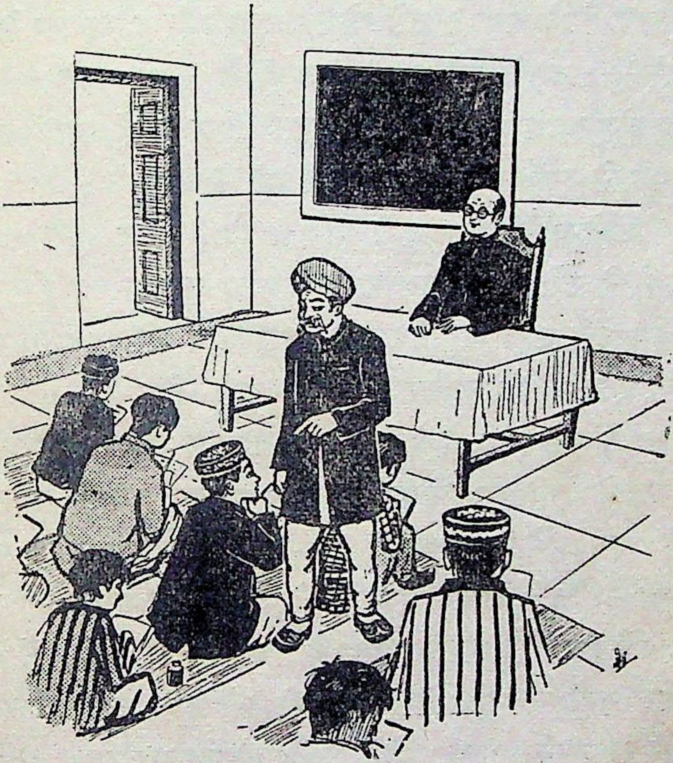

रहे हैं। वह मन ही मन बड़ा दुःखी हुआ।

मोहन बड़ा भोला-भाला लड़का था। वह पिता की खूब सेवा करता था, माता की आज्ञा मानता था और ज़रा-सी भूल हो जाने पर भी दुःखी हो जाता था। माता को मोहन के भोलेपन पर नाज़ था और पिता को उसके चरित्र पर विश्वास था। अनजाने मोहन स्कूल में कुछ बुरे लड़कों

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

के साथ बैठने लगा। उसे तो मालूम भी न था कि ये बुरे लड़के हैं। उसके बड़े भाई भी उन्हीं के साथ रहते। इसीलिए मोहनदास भी उनके साथ रहता तथा उन्हें प्यार करता था। उसे क्या मालूम था कि वे बुरे हैं या भले।

धीरे-धीरे मोहन बुरी आदतों का शिकार होने लगा। दोस्तों ने उसे मांस खिलाया। बेचारा लड़का खा तो गया, लेकिन उसे मांस के विषय में कुछ पता भी न था। उसने सिर्फ इतना ही सुना था कि मांस बुरी चीज़ है। एक दिन मोहन ने बकरा कटते देखा। अब तो उस भोले-भाले बालक के मन में ऐसी घृणा पैदा हुई, वह इतना घबरा गया कि जैसे उसके पेट में बकरा 'में-में' बोल रहा हो। उसने सोचा—ओह! बेचारे एक निर्दोष प्राणी को इसीलिए काटा जाता है कि लोग उससे अपना पेट भरें। नहीं, नहीं, मैं ऐसा हर्गिज़ नहीं करूंगा। मैं अब कभी भी मांस नहीं खाऊंगा। तभी से उसने मांस न खाने के लिए कान पकड़ा।

मांस खाना तो छूट गया, लेकिन अभी भी बुरे दोस्तों का साथ नहीं छूटा था। वे भी खूब चालाक थे। उन्होंने मोहन को मांस खिलाना तो छोड़ दिया लेकिन दूसरी बुरी आदतों में फंसाने लगे। उन्हें मालूम था कि मोहन एक अच्छे घर का लड़का है। वह घर से चुराकर पैसे लाएगा और हम सब उसके साथ मज़ा उड़ाएंगे। इसीलिए उन

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

दुष्टों ने बेचारे मोहन से अपना उल्लू सीधा करना शुरू किया। पहले तो वे कुछ स्वयं खर्च कर देते। बाद में जब मोहन उन बुरी आदतों में फंस जाता तब वे उसके पैसे से मौज उड़ाते थे। अब मोहन बीड़ी-सिगरेट भी पीने लगा। बड़े भाई भी साथ रहते थे। बीड़ी का धुआं उड़ाने में उन्हें बड़ी शान का अनुभव होता था। वे क्या जानते थे कि इससे क्या नुकसान होता है।

इस प्रकार की आदतों से खर्च बढ़ने लगा। घर से पैसे चुराने की आदत पड़ी। मोहन को बड़ा दुःख होता। उसका हृदय तो पवित्र था। भीतर ही भीतर उसकी आत्मा जैसे रोती थी। वह सोचता कि यह ठीक नहीं। कभी-कभी वह अपने दोस्तों के साथ बैठना भी छोड़ देता। लेकिन वे थे पूरे उस्ताद। इधर-उधर की बातें करके वे मोहन को मना लेते थे। खैर, अब तो आदतें काफी बढ़ गईं। अब उतने ही पैसों से काम कैसे चले! बनिये के यहां से कर्ज लिया जाने लगा। बनिये को कर्ज़ देने में क्या हर्ज था! वह तो जानता ही था कि मोहन एक बड़े घर का लड़का है, फिर उससे पैसा तो कभी न कभी मिलेगा ही। कर्ज काफी बढ़ गया और तकाज़ा शुरू हुआ। अब क्या किया जाए?

मोहन के हाथ में एक सोने का कड़ा था। निर्णय हुआ कि इसी कड़े में से एक तोला सोना सुनार से निकलवा लिया

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

जाए। राय पक्की रही। कड़ा काटा गया और बनिये का कर्ज़ चुकाया गया। मोहनदास घर आया। उसका मन डरता था कि कहीं पिताजी कटे हुए कड़े को पहचान न लें। इसीलिए वह हाथ बचाकर रखता था। पिता की निगाह ज़रूर पड़ी, लेकिन उस कटे कड़े को वे पहचान न सके। बड़े भाई खुश थे, लेकिन मोहन की आत्मा दुःखी हो रही थी। ऐसा लगता था जैसे भीतर ही भीतर उसे कोई सावधान कर रहा हो। उस दिन बेचारे मोहन को नींद न आई। वह बार-बार करवटें बदलता रहा। उसे अपने पिता का भोला-भाला चेहरा याद आता। एक-एक करके अपनी गलतियां याद आतीं। वह रोने लगा। उसने मन ही मन कहा—नहीं, नहीं, मैं अपने पिता की आशाओं पर पानी नहीं फेरूंगा। मैं अपने को बरबाद नहीं करूंगा।

बालक ने एक लम्बी सांस ली। उसने कहा—हे भगवान, मैंने यह क्या किया! उसने सोचा—मैं अपने पिता से माफी मांगूंगा। माफी! लेकिन कैसे! उनसे कैसे कहूंगा!

तो क्या करूं? बालक चिन्ता में पड़ गया। एकाएक उसने कुछ सोचा और वह कमरे में झपटकर गया। कलम उठाई। गलतियों को लिखा और चुपचाप माफी मांगने के लिए पिता के पास गया। पिताजी शान्त बैठे थे। मोहनदास उनके हाथ में वह पत्र देकर चुपचाप खड़ा हो गया। पिता

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

ने कहा, "क्या है मोहन !"

मोहन ने कुछ भी न कहा। पिता ने पत्र पढ़ना शुरू किया। ज्यों-ज्यों पढ़ते जाते, उनका गला भरता जाता, आंखें डबडबाती जातीं। पत्र को छोड़कर उन्होंने मोहन को गले से लगाकर कहा, "बेटा, यही कुसंग का फल है।"

फिर वे रोने लगे। कुछ नहीं बोले। सिर्फ उनकी आंखों से अश्रु गिर रहे थे। मोहन को बड़ा दुःख हुआ। उसका मन ग्लानि से भर गया, लेकिन एकाएक जैसे उसकी नसों में चेतना आ गई। भौंहें तन गईं। उसने मन ही मन कहा—अब बुराई में नहीं पड़ूंगा। कुसंग का फल मुझे खूब मिला। अब मैं ऐसा नहीं करूंगा—नहीं करूंगा।

वास्तव में उस बालक ने उसी दिन दुष्टों का साथ छोड़ दिया। अब वह मन लगाकर पढ़ता और सबसे अलग रहता। उसने अपनी इस प्रतिज्ञा को हमेशा याद रखा। वही मोहन बाद में मोहनदास करमचंद गांधी—महात्मा गांधी तथा भारत का बापू बनकर विख्यात हुआ।

बापू के जीवन की यह घटना हमें बताती है कि बुरी संगत से हमें दूर रहना चाहिए। बुरे संग से बुराई बढ़ती है और हमारा पतन होता है। महान वही बनता है जो अपनी गलतियों को स्वीकार कर उन्हें सुधारने की कोशिश करता है।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

पिता का वचन और मित्र का ऋण

* * * * * *

"मां आज तो तुम्हें बताना ही पड़ेगा ! तुम बार-बार कहती हो कि पिताजी शीघ्र आएंगे, शीघ्र आएंगे। आज जब तक तुम यह नहीं बताओगी कि वे कहां गए हैं तब तक न तो मैं दूध पीऊंगा, न तुमसे बोलूंगा ही। बोलो न मां, चुप क्यों हो ?"

रानी रूपसुन्दरी चुप थीं। उनकी आंखों से धीरे-धीरे अश्रु गिरने लगे। हृदय दुःख से भर गया था।

मां को रोते देखकर बच्चे के मन में और दुःख हुआ। उसने फिर पूछा, "बोलो न मां ! मां, तुम मेरी बातें सुनकर दुःखी क्यों होती हो ? पिताजी कहां हैं ? बोलो, मैं स्वयं जाकर उन्हें ले आऊंगा।"

रानी का हृदय और दुःखी हो गया। वे अपने प्यारे बच्चे बनराज को गले से लगाकर रोने लगीं। बनराज ने फिर कहा, "मां, बताओ पिताजी कहां हैं ? वे जहां भी

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

होंगे मैं वहां पहुंच जाऊंगा।"

मां ने रोते हुए कहा, "मेरे प्यारे बच्चे, तुम्हारे पिता भगवान के पास पहुंच चुके हैं। वे अब इस दुनिया में नहीं हैं। उनसे तुम कभी भी नहीं मिल सकोगे।"

इतना कहकर वह खूब रोई। बालक बनराज भी उसके साथ रोने लगा। थोड़ी देर के बाद मां ने फिर कहा, "बनराज, अब तुम पूरे पांच वर्ष के हो गए। आज तक मैंने तुम्हें खुश रखने के लिए यह कहानी नहीं बताई, लेकिन आज बताऊंगी। आओ सुनो। बेटा, तुम्हारे पिता पंचासर के राजा थे। हम सबकी ज़िन्दगी आनन्द से बीतती थी। लेकिन एक बार भुवड़ नाम के एक दुश्मन ने तुम्हारे पिता पर चढ़ाई कर दी। उन्होंने बड़ी बहादुरी से उसका सामना किया, परन्तु उस राक्षस के पास विशाल सेना थी। हमारी सेना हारने लगी। किला टूटनेवाला था। तुम्हारे पिता मेरे पास आए। उस समय तुम्हारा जन्म होने ही वाला था। उन्होंने मुझसे कहा, 'तुम अपने भाई के साथ शीघ्र जंगल में चली जाओ। मैं अन्तिम बार युद्ध करूंगा। होनेवाले बच्चे की रक्षा तुम्हें करनी है, जिससे अपना कुल डूबने न पाए। यदि लड़ाई में हमारी जीत हुई तो मैं तुम्हें शीघ्र बुला लूंगा। नहीं तो मेरा बेटा जंगल का राजा होगा। वही एक न एक दिन हमारे दुश्मनों से बदला

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

लेगा।' मैंने वहीं रहकर उनके साथ ही प्राण देने की प्रार्थना की, किन्तु उन्होंने मेरी बात न मानी। अन्त में हम इस जंगल में आए। यहीं तुम्हारा जन्म हुआ। पर हाय, युद्ध में उस राक्षस ने तुम्हारे पिता का सिर काट डाला!"

इतना कहकर रानी रूपसुन्दरी फूट-फूटकर रोने

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

लगीं। दुःख की अधिकता से उनका गला भर आया।

बालक बनराज की भवें तन गईं। उसका मुख क्रोध से लाल हो गया। उसने मां के आंसू पोंछते हुए कहा, "मां, चुप रहो। पिताजी ने कहा था, 'मेरा बेटा एक न एक दिन दुश्मनों से बदला लेगा।' मैं पिता के वचनों को पूरा करूंगा।"

"लेकिन बेटा, भुवड़ बड़ा बलवान है। तू मेरा छोटा-सा नन्हा बेटा है।"

"मां, चाहे जो भी हो, मैं अपने पिता को मारनेवाले से बदला लूंगा। अपनी पवित्र मातृभूमि का उद्धार उस खूनी के हाथ से करूंगा।"

दिन बीतने लगे। गुरुजी बनराज को धर्म की शिक्षा देते, अहिंसा का उपदेश देते और दया तथा क्षमा करने की बातें सिखाते। लेकिन बनराज इन सब बातों पर ज़रा भी ध्यान न देता। अन्त में गुरुजी ने भी उससे कहा, "बेटा, तू राजपुत्र है। तू संन्यासी नहीं बन सकता। जा, वीरता से अपने पिता का राज्य प्राप्त कर!"

अब तक बनराज बड़ा हो चुका था। वह दिन-रात जंगलों में घूमता। भीलों, गड़रियों और जंगली जातियों का संगठन करता। उसकी वीरता देखकर वे भी उसे अपना राजा मानने लगे। इसी समय अणहिल नाम का

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

एक गड़रिया मिला। बनराज की वीरता और उसकी सचाई की वजह से वह उसका सच्चा मित्र बन गया। दोनों एक-दूसरे से खूब प्रेम करते। धीरे-धीरे बनराज ने एक छोटी-सी सेना खड़ी कर ली। अणहिल इस सेना का प्रधान सेनापति था। अब सवाल पैसों का था। सेना के खर्च के लिए पैसे चाहिए। पैसे कहां से आएं।

बहुत सोच-विचार के बाद यह निश्चय हुआ कि धनिकों से पैसा वसूल किया जाए। अतः जो भी धनी व्यक्ति उस रास्ते से आता उसे अणहिल और बनराज रोक लेते। उससे पूरा पैसा लेकर ही छोड़ते। खज़ाना बढ़ने लगा। एक दिन चांपा नाम का एक बनिया उधर से गुज़रा। वह बड़ा वीर था। बनराज उसे लूटना चाहता था। चांपा ने वीरता से मुकाबला किया। बनराज उसकी वीरता पर मुग्ध हो गया। उसने उसे अपना मित्र बना लिया। चांपा ने जब सुना कि यह बनराज राजा जयशिखरी का पुत्र है और फिर से अपना राज्य प्राप्त करना चाहता है, तब वह बड़ा खुश हुआ। गुजरात पर विदेशी राजा भुवड़ का शासन उसे बुरा लगता था।

तीनों मित्र खूब मिलकर रहते। उनमें आपस में कोई भेद नहीं था। वे तीनों शरीर से तीन थे, परन्तु उनके प्राण एक थे। उन्होंने खूब परिश्रम करके सेना की शक्ति

25816

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

को बढ़ाया। लड़ाई छिड़ गई। इन तीनों सच्चे वीरों की वीरता के आगे राजा भुवड़ की सेना को हार खानी पड़ी। पंचासर पर बनराज का अधिकार हो गया। यही नहीं, बनराज ने धीरे-धीरे गुजरात का एक विशाल राज्य स्थापित कर लिया। इस विशाल राज्य की राजधानी उसने पाटण में बसाई।

इस विजय का उत्सव मनाया गया। बनराज ने अपनी माता को बुलाकर उसकी चरण-वन्दना की। लोग बनराज का गुण गाने लगे। आज उनकी गुर्जरभूमि स्वतन्त्र थी। मां ने अपने वीर बालक को गले से लगा लिया। बनराज आनन्द से विह्वल हो गया। उसे गर्व था कि उसने अपने पिता के वचनों को पूर्ण किया और उनकी अभिलाषा पूरी की। पाटण में उत्सव मनाया जा रहा था। लोगों ने इस नये नगर का नाम 'बनराज पाटण' रखना चाहा, परन्तु बनराज ने इसका विरोध किया। उसने कहा, "भाइयो, आज हमारी मातृभूमि आज़ाद हुई। इसके लिए मैं अपने मित्र अणहिल और चांपा का आभारी हूं। इनकी वीरता और इनके सहयोग ने ही आज यह दिन दिखाया। मेरे ऊपर इन मित्रों का ऋण है। इनकी सहायता से ही बनराज ने यह महान कार्य किया है। मैं इनका उपकार कैसे भूल सकता हूं! अतः गुजरात की इस राजधानी का नाम

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

अणहिलपुर-पाटण रहेगा, जिससे गुजरात की जनता मित्र अणहिल के ऋण को कभी न भूल सके। साथ ही यहां से थोड़ी दूर पर एक दूसरा सुदृढ़ नगर बसाया जाएगा जिससे हमारी आज़ादी की रक्षा हो सके। उस नगर का नाम चांपानगर होगा।"

महाराज बनराज की इस घोषणा को सुनकर लोग स्तब्ध हो गए। अणहिल और चांपा तो मारे प्रेम के महाराज के चरणों से लिपट गए। लोगों ने तीनों मित्रों की जय बोली। महाराज बनराज के प्रति लोगों का आदर बढ़ गया। सभी ने कहा—मित्र हो तो ऐसा हो।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

अद्भुत गुरु-भक्ति

* * * * * *

समर्थ स्वामी रामदास सारे महाराष्ट्र के गुरु बन चुके थे। दूर-दूर से लोग उनके पास आते और उनके उपदेश सुनकर आनन्दमग्न हो जाते थे। स्वामीजी के शिष्य उनकी आज्ञा पर प्राण देने को तैयार रहते। परन्तु स्वामीजी का जीवन बड़ा सादा था। वे अपने पास कुछ भी नहीं रखते थे। भोजन के समय बाहर निकल जाते। जो कुछ मिलता खा लेते और आराम से पड़े रहते। वे दूसरों को खूब ज्ञान देते थे, लेकिन किसीसे कुछ भी लेते नहीं थे। गांव-गांव जाकर लोगों को ज्ञान देना, गरीबों की सेवा करना और भगवान का भजन करना यही उनका काम था।

एक दिन स्वामी रामदास सतारा पहुंचे। भोजन का समय था। स्वामीजी अपने शिष्यों के साथ भिक्षा मांगने निकल पड़े। उनके शिष्य मधुर ध्वनि में गीत गा रहे थे। शहर के सभी लोग सोचते थे कि स्वामीजी आज मेरे घर

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

भिक्षा ग्रहण करते तो कितना अच्छा होता ! लोग घर के बाहर निकलकर स्वामीजी के दर्शन करने लगे। स्त्रियां, बूढ़े, बच्चे सभी स्वामीजी के दर्शन के लिए निकल पड़े। पहले जो घर आया स्वामीजी उसी घर के द्वार पर आए। गरीब का घर था। वह गरीब स्वामीजी के चरणों पर गिर पड़ा। जो कुछ था, दिल खोलकर दिया। महात्मा का स्वागत कर वह धन्य हो उठा। लोग उसके भाग्य को लालच-भरी दृष्टि से देख रहे थे। स्वामीजी आगे बढ़े।

इसी दिन शिवाजी किसी राज्यकार्य से सतारा आए थे। न तो शिवाजी को मालूम था कि स्वामी रामदास यहां आए हैं, न स्वामी रामदास को ही शिवाजी के आने की खबर थी। बाहर कीर्तन की ध्वनि सुनकर शिवाजी ने पूछा, "वहां पवित्र संगीत कौन गा रहा है ?"

एक कर्मचारी ने उत्तर दिया, "महाराज, समर्थ स्वामी रामदास दोपहर की भिक्षा के लिए शिष्योंसहित बाहर निकले हैं।"

शिवाजी ने आश्चर्य से कहा, "स्वामी रामदास ! मुझे तो खबर भी न थी।"

"हां महाराज ! यही नहीं, बल्कि उस पास के घर से भिक्षा लेकर अब इसी घर की ओर वे आ रहे हैं।"

"स्वामीजी यहां आ रहे हैं ! भिक्षा मांगने आ रहे

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

हैं !" शिवाजी क्षण-भर को शांत हो गए। एकाएक कुछ सोचकर बोले, "बालाजी !"

"हां, श्रीमंत !"

"अभी एक दानपत्र लिखिए। आज तक मैंने जितना भी राज्य जीता है, वह सब मैंने समर्थ गुरु को भिक्षा में दिया।"

"लेकिन महाराज..."

"लेकिन नहीं बालाजी, शीघ्र लिखो। पवित्र महात्मा के चरणों पर सारी पृथ्वी का राज्य दे दिया जाए तो भी थोड़ा है। जल्दी करो। संगीत का स्वर नज़दीक सुनाई दे रहा है। शायद वे आ ही गए हैं।"

बालाजी से कागज़ हाथ में लेते हुए शिवाजी ने उसपर राजमुहर लगा दी और फौरन द्वार की तरफ चल पड़े। अब तक समर्थ भी दरवाज़े पर आ चुके थे। रामधुनि लगी। झोली फैल गई। शिवाजी बाहर आए। संत की उस थैली में उन्होंने वह कागज़ डाला और गुरु के चरणों से लिपट गए। स्वामी रामदास ने आश्चर्य से कहा, "अरे शिवा तू ! थैली में कागज़ क्यों डाला है। इसमें तो कुछ अन्न डालना चाहिए।"

शिवाजी ने नम्रता से कहा, "महाराज, जो कुछ देना था दे दिया।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

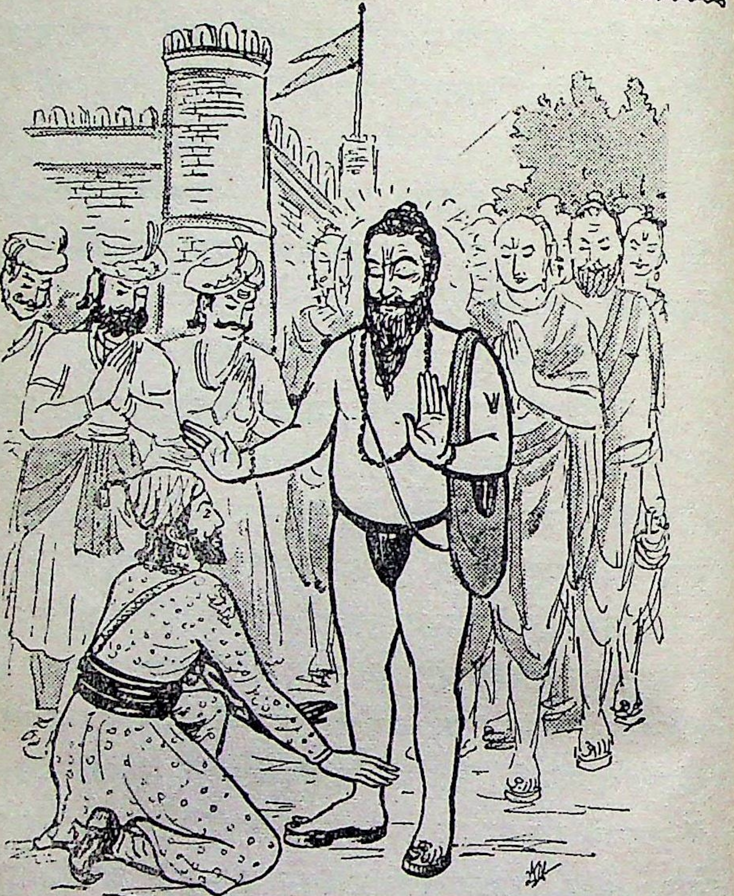

"कागज़ में ! ज़रा देखो कल्याण, इसमें क्या है ?"

कल्याण गोसाईं ने कागज़ खोला। पढ़ने लगे—"आज तक मैंने जितना भी राज्य जीता है वह सब समर्थ गुरु को भिक्षा में दिया।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

"सब दे दिया ! तब तू कहां रहेगा शिवा ?" स्वामी रामदास ने कहा ।

"महाराज, आपके पीछे इतने शिष्य हैं। मैं इन साधुओं में शामिल हो जाऊंगा और आपकी चरण-सेवा करूंगा ।"

"अच्छा ! तू तो मेरा शिष्य है ही। लेकिन मैं यह राज्य लेकर क्या करूंगा ! इसे तू ही संभाल शिवा !"

"गुरुदेव, मेरी इस छोटी-सी भेंट को स्वीकार करें। अब मैं इसे वापस न लूंगा। मुझे अपने से अलग न करें गुरुदेव !"

शिवाजी का गला भर आया। गुरु के पैरों से वे फिर लिपट गए। सभी लोग इस अद्वितीय दान को देखकर स्तब्ध थे। गुरु ने अपने शिवा को उठाया और उनके सिर पर प्यार से हाथ फेरा। अति स्नेह-भरे स्वर में कहा, "प्यारे शिवा, यह तेरा राज्य मेरा हुआ। तू मेरा प्रिय शिष्य है। तेरा चरित्र उज्ज्वल है। मेरे शिष्यों में तू सबसे बड़ा और महान है। पिता के धन का या उसके राज्य का पुत्र ही मालिक होता है। तू मेरा प्यारा और बड़ा पुत्र है। ले, यह मेरा राज्य तू संभाल। जा पुत्र, पिता के राज्य का उचित संचालन कर। मैंने अपनी तरफ से तुझे इस राज्य का संचालक नियुक्त किया।"

शिवाजी ने बहुत इनकार किया, लेकिन पिता के समान

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

प्यारे गुरु की आज्ञा माननी ही पड़ी। सभी ने आश्चर्य से यह दृश्य देखा। ऐसे गुरु और शिष्य की महानता का वर्णन कौन कर सकता है!

शिवाजी ने राज्य चलाना शुरू किया। गुरु के द्वारा प्राप्त राज्य के झंडे का रंग उन्होंने भगवा रखा, क्योंकि उनके गुरु भगवा रंग का कपड़ा पहनते थे। तब से जब कभी शिवाजी की शाही सवारी निकलती थी तब सबसे पहले एक हाथी भगवा रंग के कपड़े से सजाया जाता था और उस-पर भगवा झंडा फहराता रहता था। इसके पीछे ही शिवाजी की सवारी निकलती थी। यह बात उनकी गुरु-भक्ति और उनके अपूर्व दान का स्मरण दिलाती रहेगी।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

ज्ञान की प्यास

* * * * * *

घनघोर जंगलों को पार करता हुआ वह चला जा रहा था। चारों तरफ भयानक अंधकार, सुनसान जंगल, अंधेरी रात और वह था अकेला। कभी शेरों की दहाड़ सुनाई देती, कभी पास से ही फुफकारते हुए सांप निकल जाते और कभी रास्ता ही भूल जाता था। कितना भयंकर रास्ता था ! साथ में साथी नहीं, मित्र नहीं और रास्ता भी बिना जाना-सुना। परन्तु उसे कौन रोक सकता था ! चीन का राजा भी उसकी यात्रा के विरुद्ध था। वह नहीं चाहता था कि उसके देश का एक आदमी हिन्दुस्तान जाए और वहां से ज्ञानी बनकर आए। कौन जाने कि उसके ज्ञान से प्रजा में असंतोष फैल जाए और राजा के शासन में गड़-बड़ी पैदा हो जाए। शायद इसीलिए राजा ने नियम बना दिया था कि चीन का कोई भी व्यक्ति विदेश नहीं जा सकता। लेकिन जिसे ज्ञान की सच्ची प्यास है उसे मुसीबतों से क्या

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

डर ! राजा ने आज्ञा निकलवा दी थी कि ह्वेनसांग नाम का व्यक्ति चीन से बाहर जा रहा है। वह जहां भी मिले पकड़ लिया जाए और तुरंत मेरे दरबार में हाज़िर किया जाए। इसीलिए बेचारा ह्वेनसांग रात को ही चलता था। जान-बूझकर वह बुरे रास्ते से ही जाता था। वह तो ज्ञान की प्राप्ति के लिए जा रहा था। फिर उसकी समझ में नहीं आता था कि राजा ने ऐसी आज्ञा क्यों दी है। ज्ञान के लिए कोई विदेश जाए तो उसकी मदद करनी चाहिए। उसको प्रेम से विदा देनी चाहिए। यहां तो उलटे उसे पकड़ने की ही आज्ञा थी। इसकी वजह से बेचारे ह्वेनसांग को और कठिनाई उठानी पड़ी। उसके पास पूरा पैसा भी नहीं था, राजा उसका विरोधी था और रास्ता मालूम नहीं था। पर जहां चाह वहां राह है।

कुछ दूर चलने पर वह बिलकुल रुक गया। अब तो रास्ते का पता लगना बिलकुल असम्भव था। लाचार होकर उसने एक पहाड़ी आदमी को अपना मार्गदर्शक बनाया। उसे कुछ पैसे देने का वचन दिया। पैसे का नाम सुनकर वह आदमी ह्वेनसांग के साथ चलने के लिए तैयार हो गया। दोनों साथ-साथ चले। उसका तो जीवन ही इन पहाड़ों में बीता था। वह यहां के कण-कण से परिचित था। ह्वेनसांग उसके पीछे-पीछे चला जा रहा था। उस दिन उसे बड़ा आनन्द आया।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

वह मन ही मन भगवान को धन्यवाद देने लगा। चलते-चलते ह्वेनसांग थक गया। दोनों पास ही एक सुन्दर वृक्ष की छाया में आराम करने लगे। ह्वेनसांग को चलने की आदत न थी। दिन-भर की थकान और वह शीतल छाया। देखते ही देखते वह सो गया। उस पहाड़ी व्यक्ति ने देखा, उसका मालिक आराम से सो रहा है। एकाएक उसके मन में एक विचार आया—मैं पैसे के लिए ही तो इसके साथ चल रहा हूं। फिर इतना कष्ट क्यों उठाऊं! ज़रा-सी तो बात है, बस काम तमाम।

उसका चेहरा भयानक हो गया। उसने फौरन अपनी कमर से एक छुरी निकाली। उसकी तेज़ धार चमक उठी।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

हत्यारे ने इधर-उधर देखा और छुरी ह्वेनसांग के सीने के पास ले गया। उस सुनसान जंगल में कोई न था। लेकिन चोर का जी आधा। उसने फिर इधर-उधर देखा। एकाएक हवा का तेज़ झोंका आया और ह्वेनसांग की नींद टूट गई। वह उठ बैठा। हत्यारा भय से कांप उठा। छुरी उसके हाथ से गिर गई और वह बेतहाशा भागा। वह चमचमाती छुरी ह्वेनसांग के आगे पड़ी थी। उसने सोचा, यहां किसपर विश्वास किया जाए! उसने एक लम्बी सांस ली और धीरे-धीरे आगे बढ़ा।

उस दिन की घटना ने उसके मन को विक्षिप्त कर दिया था। वह रुका नहीं, चलता रहा। चलते-चलते उसे ज़ोर की प्यास लगी। पानी कहां मिले! जिधर देखो उधर पहाड़ ही पहाड़। वह एक ऊंची चोटी पर चढ़ गया। वहीं से नीचे की तरफ एक झरना देखा। उस स्वच्छ जलवाले झरने को देखकर उसके मन में उत्साह आया। वह नीचे गया और आराम से पानी पीने लगा। इसी समय कहीं से एक तीर आकर गिरा। थोड़ा ही बचा, नहीं तो जीवन का अन्त हो जाता। ह्वेनसांग ने जैसे ही पीछे देखा कि कड़ककर आवाज़ आई, "ठहरो!"

वह व्यक्ति पास आ गया। उसने पूछा, "तुम कौन हो? यहां क्या करने आए हो?" ह्वेनसांग ने अपना परिचय दिया।

"ह्वेनसांग! ह्वेनसांग! तुम चीन के निवासी हो?

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

अच्छा, चलो मेरे साथ।"

ह्वेनसांग को उस सिपाही के साथ जाना पड़ा। वह उन सिपाहियों के सरदार के पास आया। यहां उसे मालूम पड़ा कि वह चीन के राजा के कर्मचारियों के हाथ में पड़ गया है। अब वह क्या करे! वे लोग उसे चीन वापस भेजने के लिए तैयार थे। ह्वेनसांग ने उन्हें अपने भारत जाने का कारण बताया। उसने कहा, "भाई, मैं तो भगवान बुद्ध की जन्मभूमि के दर्शन करने जा रहा हूं। वहां उनके उपदेशों का अध्ययन करूंगा। भला इसमें कौन-सी बुरी बात है?" लोगों ने जब भगवान के दर्शन की बात सुनी तब वे पिघल गए। उन्होंने उसे मुक्त कर दिया।

वह आगे बढ़ा और गोबी के रेगिस्तान में आ गया। अब वह चीन के राजकर्मचारियों की पहुंच के बाहर था। यह प्रदेश कितना भयंकर था! दिन में भयंकर गर्मी पड़ती थी। पैर जलने लगते थे। आंधी चलती थी। बालू आंखों में उड़कर पड़ती थी। शरीर जल उठता था। परन्तु वह वीर चला जा रहा था। रात को उस सुनसान में वह अकेला सोता था। वहां उसका कोई अपना न था। खाने को पूरा अन्न नहीं, पीने के लिए पूरा पानी नहीं। दिन की गर्मी से जलना और रात के सुनसान में अकेले रहना। कितना कठोर जीवन था! इन सारी मुसीबतों में उसे एक

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

ही बात जिला रही थी। इस अंधकार में उसे एक ही प्रकाश मिलता था। पानी की प्यास को एक ही चीज़ कम कर रही थी। वह चीज़ थी ज्ञान की प्यास। किसी तरह भारत पहुंचना था और ज्ञान की प्यास मिटानी थी।

अब वह साहसी यात्री काश्मीर पहुंचा। हिन्दुस्तान की पवित्र भूमि के दर्शन कर उसका मन आनन्दमग्न हो गया। लेकिन यहां एक दूसरी ही मुसीबत मुंहबाए खड़ी थी। ह्वेनसांग की भाषा चीनी और भारत की भाषा संस्कृत तथा प्राकृत। अब एक-दूसरे की बातें कैसे समझी जाएं। किसीसे पढ़ें भी तो कैसे पढ़ें। गुरु संस्कृत जाने और चेला चीनी। पढ़ाई किस भाषा में शुरू हो! खैर, न जाने कितनी कठिनाइयों से ह्वेनसांग ने काश्मीर में संस्कृत और पाली भाषाएं सीखीं। वहां से खूब ज्ञान प्राप्त कर वह वीर आगे बढ़ा। उसने सुना कि काशी ज्ञान का केन्द्र है। इतना मालूम होना था कि ह्वेनसांग का मन काशी जाने के लिए ललचा गया। वह गंगा नदी से नाव द्वारा जा रहा था कि एकाएक एक विपत्ति में फंस गया। कुछ दुष्टों ने उसे पकड़ लिया। वे उसे देवी के सामने बलिदान देने के लिए ले गए। अब तो बेचारा यात्री मृत्यु की अंतिम घड़ियां गिनने लगा। दुष्टों ने तलवार खींच ली। उन्होंने कहा, "तैयार हो जाओ। मां भगवती के सामने अर्पित होने के लिए तैयार

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

हो जाओ।" ह्वेनसांग इस समय भी डरा नहीं। उसके हृदय में अटूट विश्वास था। मुख पर तेज झलक रहा था। वह भगवान की प्रार्थना में डूब गया। उसने ज़ोर से कहा, "हे भगवान ! मरने से मैं कहां डरता हूं, लेकिन क्या बिना पूर्ण ज्ञान प्राप्त किए ही मर जाऊंगा ! प्रभो ! क्या मेरी अभिलाषा अपूर्ण रह जाएगी !" जब वह ध्यानमग्न था तब उसका चेहरा और चमक रहा था। दुष्टों ने उस सुन्दर व्यक्ति के चेहरे को ध्यान से देखा। वे उसपर मुग्ध हो गए। उन्होंने उसकी प्रार्थना के शब्द सुन लिए। उनके मन में दया आ गई। उनका पत्थर-दिल पिघल गया और उन्होंने उसे मुक्त कर दिया।

ह्वेनसांग ने काशी में बड़े परिश्रम से विद्याध्ययन किया। अब वह नालन्दा गया। नालन्दा उस समय का सबसे बड़ा विश्वविद्यालय था। नालन्दा के आचार्य शीलभद्र ने ह्वेनसांग की विद्वत्ता को देखा। उन्होंने इस साहसी युवक का बड़ा सम्मान किया। ह्वेनसांग ने यहां हर प्रकार की शिक्षा प्राप्त की। अब उसकी कीर्ति सारे भारत में फैल गई। एक बार एक पंडित उससे शास्त्रार्थ करने आया। उसने यह शर्त रखी कि जो भी इस शास्त्रार्थ में हारेगा उसे अपना सिर कटवाना पड़ेगा। ह्वेनसांग ने शर्त मंजूर कर ली। शास्त्रार्थ शुरू हुआ। पंडित प्रश्न पर प्रश्न करता जाता

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

था और ह्वेनसांग उनके उत्तर शांति से देता जाता था। अब ह्वेनसांग ने प्रश्न करना शुरू किया। लेकिन पंडित एक भी प्रश्न का उत्तर न दे सका। पंडित का सारा शरीर कांपने लगा। पसीना बहने लगा। उसे अपनी शर्त याद आई। लेकिन ह्वेनसांग तो उदारता का भंडार था। सच्चा ज्ञानी घमंडी और क्रूर नहीं होता है। उसने उसे माफ कर दिया।

नालन्दा में बहुत दिन रहकर उसने वहां से विदाई ली। विश्वविद्यालय के सभी छात्र और अध्यापक इस वियोग से दुःखी हो गए। उन्होंने उसे करुण हृदय से विदाई दी। कुछ छात्र तो साथ-साथ कुछ दूर तक पहुंचाने चले। रास्ते में ये लोग नदी पार कर रहे थे। नाव में असंख्य पुस्तकें रखी थीं। इन्हें ह्वेनसांग स्वदेश ले जा रहा था। एकाएक नाव में पानी बढ़ने लगा। बहुत कोशिश करने पर भी ऐसा लगा कि नाव डूब जाएगी। नाविकों ने कहा, "नाव का बोझ हल्का करना पड़ेगा। इन पुस्तकों में से कुछ को पानी में फेंकना पड़ेगा।" ह्वेनसाग अवाक् हो गया। ये पुस्तकें उसकी पूंजी थीं। उन दिनों आजकल की तरह छापेखाने तो थे नहीं। वे तो हाथ से लिखी गई थीं। उनको लिखने में ह्वेनसांग ने रात-दिन एक कर दिया था और अपना रक्त सुखा दिया था। आज उन्हीं को पानी में फेंक दे! उसका हृदय पीड़ा से भर गया। साथी छात्रों ने उसके दुःख-भरे

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

चेहरे को देखा। उन्होंने थोड़ी देर आपस में कुछ बातें कीं। फिर एकाएक एक विद्यार्थी मुस्कराता उठा। धम्...फिर धम्...धम्...धम्। वे एक-एक करके नदी की तीव्र धारा में कूद पड़ें। उन्होंने कहा, 'हमारे जीवन से ये पुस्तकें कीमती हैं। हम एक विदेशी को निराश नहीं जाने देंगे।' ह्वेनसांग अवाक् था। वह सोच रहा था—वाह रे त्याग! वह उदास मन से नदी के पार आया। उसने भारतभूमि का खूब भ्रमण किया। अब तो भारत का कण-कण उसके लिए पवित्र था। राजा हर्ष ने भी उसे खूब मान दिया। वह तेरह वर्षों तक भारत में रहा। अब स्वदेश लौट चला। राजा हर्ष ने उसके जाने का पूरा प्रबन्ध कर दिया। उसके आगे-आगे ऊंटों के काफिले पर उसकी पुस्तकें चल रही थीं और पीछे-पीछे वह। इस समय भारतभूमि का वियोग उसे सता रहा था। वह चुपचाप चला जा रहा था और जब वह उन पुस्तकों की ओर देखता तब तो उसे भारतीय विद्यार्थियों के त्याग की कहानी याद आ जाती और उसकी आंखों से अश्रु की बूंदें गिरने लगतीं।

उसके ज्ञान की प्यास बुझ चुकी थी। उसे बुझाने के लिए जो भयंकर कष्ट उसने सहा था वह याद आ रहा था, परन्तु उन भारतीयों के त्याग के आगे तो वह अपने-आपको भी भूल जाता था।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

अधिकार किसका ?

* * * * * *

"आह! किस निर्दयी ने इस अबोध प्राणी को मारा। कितना कोमल, कितना सुन्दर और कितना भोला-भाला पक्षी है!" सिद्धार्थ ने पक्षी के शरीर पर हाथ फेरा। उसकी आंखें खोलीं। ऐसा लगता था जैसे वह नया जीवन पा गया। इसी समय किसीकी आवाज़ आई, "भाई सिद्धार्थ; यह मेरा पक्षी है, छोड़ दो इसे।"

सिद्धार्थ ने देखा तो सामने देवदत्त खड़ा था। उन्होंने कहा, "कौन देवदत्त! तुम्हारा पक्षी! क्या तुमने ही इसे घायल कर दिया?"

"हां, हां, मैंने ही! कितना अच्छा निशाना लगाया। यह तेज़ी से उड़ा जा रहा था। पर वाह रे मेरे बाण! क्या ठीक लगा! एक ही बार में शिकार हाथ में आ गया। सिद्धार्थ, दो इसे!"

"अच्छा, खूब रहा तुम्हारा निशाना। किसीके प्राण

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

गए और तुम्हारा निशाना सफल रहा ! देवदत्त, देखते नहीं हो बेचारे का करुण मुख ! आह ! इसकी आंखों में कितना दुःख है ! यह कुछ भी नहीं बोल सकता, लेकिन इसकी आंखें इसके मन की सारी पीड़ा कहे दे रही हैं। देवदत्त, इतने वीर होकर भी इसी तुच्छ पक्षी पर तुमने अपनी वीरता का प्रयोग किया !"

"सिद्धार्थ, मैं तुमसे बहस करने नहीं आया हूं। बड़े साधु बने हो। चलो, लाओ मेरा पक्षी।"

"पक्षी तुम्हें न मिलेगा, देवदत्त ! तुमने इसे मारा। बेचारा अभी भी ज़िन्दा है। अब मैं तुम्हारे हाथ में इसका जीवन न दूंगा।"

"न दोगे ! क्यों न दोगे ? यह पक्षी मेरा है। इसपर मेरा अधिकार है। मैं इसे अवश्य लूंगा।" देवदत्त ने कहा।

"तुम्हारा अधिकार ! यह कैसे ? तुम्हें इसके जीवन से क्या लाभ ? तुमने तो इसे मारा है। इसके जीवन पर तुम्हारा कैसा अधिकार ?"

"मैंने इसे मारा है, इसीलिए तो कहता हूं कि यह मेरा है। इसपर मेरा अधिकार है। आकाश में उड़नेवाले पक्षी, जंगल में दौड़नेवाले जानवर किसीके नहीं हैं। जो उन्हें पकड़ ले, मार ले, वे उसीके हैं। यही न्याय है। सिद्धार्थ, तुम अन्याय कर रहे हो। यह पक्षी मेरा है। इसे मुझे दो।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

"अन्याय ! मैं अन्याय कर रहा हूं ? देखते हो बेचारा कितना दु:खी है ! इसके पंख फड़फड़ा रहे हैं। लगता है कि अब मरा, अब मरा। मैं इसकी रक्षा करूंगा। यह मेरे पैरों के पास गिरा। यह मेरी शरण आया। मैं इसकी रक्षा करूंगा। क्या मैं इस पक्षी को तुम्हें इसलिए दे दूं कि तुम इसका जीवन समाप्त कर दो ? क्या यही न्याय है, देवदत्त ? नहीं, नहीं, मैं यह पक्षी तुम्हें न दूंगा, न दूंगा।"

"पक्षी नहीं दोगे ! तब तो तुम्हें महाराज के पास न्याय के लिए चलना होगा।"

"चल सकते हो देवदत्त ! पिताजी के न्याय पर मुझे विश्वास है।"

दोनों ही महाराज शुद्धोदन के पास आए। महाराज राजसिंहासन पर विराजमान थे। मंत्रीगण बैठे थे। आते ही देवदत्त ने अपनी फरियाद सुनाई और न्याय की मांग की।

महाराज ने सिद्धार्थ से कहा, "क्यों बेटे, तुम इस पक्षी को देवदत्त को क्यों नहीं देते ? तुम्हें आवश्यकता हो तो मैं दूसरा पक्षी मंगवा देता हूं।"

सिद्धार्थ ने कहा, "महाराज, मैं इस पक्षी की ओर से आपसे न्याय की मांग करता हूं। इसे देवदत्त ने मारा। यह मेरी शरण में आकर गिरा। इसकी करुण आंखों को

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

देखिए। यह अब भी भयभीत है। आप मेरे पिता हैं; परन्तु मैं अपने पिता से नहीं, इस देश के राजा से यह प्रार्थना करता हूं कि इस पक्षी की प्राण-रक्षा की जाए।"

"हां पिताजी, न्याय किया जाए कि यह पक्षी किसका है। सिद्धार्थ दया का ढोंग रचकर मेरा पक्षी लेना चाहता है। मैंने इसे मारा है। आकाश में उड़नेवाले पक्षी और जंगल के जानवर उसीके होते हैं जो उन्हें पकड़ता या मारता है। न्याय से यह पक्षी मेरा है। महाराज! सिद्धार्थ अन्याय से मेरा पक्षी लेना चाहता है। आप कृपया न्याय कीजिए।"

"सिद्धार्थ, देखो देवदत्त क्या कह रहा है। क्या तुम्हें इस विषय में कुछ कहना है?" महाराज शुद्धोदन ने कहा।

"राजन्, मैं भला और क्या कह सकता हूं! हां, इतना जरूर कहूंगा कि यह पक्षी घायल होकर मेरी शरण में आया है। मैं शरणागत की रक्षा करूंगा। महाराज, जो जीवन दे नहीं सकता, उसे किसीका जीवन ले लेने का क्या अधिकार है? आकाश में उड़नेवाले भोले-भाले पक्षी कुछ बोल नहीं सकते, कुछ फरियाद नहीं कर सकते। क्या इसीलिए उन्हें जो मार दे वे उसीके हो जाएं? प्राण लेने-वाले के हाथ में किसी निर्दोष और भोले प्राणी को सौंपना क्या न्याय है? किसी गरीब को कोई सताए, दुःख दे

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

और यदि वह बेचारा कुछ कह नहीं सके तो क्या उस अत्याचारी के आगे उसे डाल देना ही न्याय है ? राजन् ! क्या यह मूक कुछ कह नहीं सकता इसीलिए उसपर जो कुछ किया जाए वह न्याय है ? किसी गरीब की जान बचाना, उसकी रक्षा करना, उसे जीवन-दान देना और उसे शरण देना क्या अन्याय है ?"

सारी सभा मौन हो गई। महाराज शुद्धोदन भी चुप हो गए। आज उन्हें एक विचित्र न्याय करना था। देवदत्त और सिद्धार्थ दोनों ही उनके पुत्र थे। पुत्र का न्याय पिता को करना था। एक तरफ यह सदा से होता चला ही आया है कि पक्षी को जो मारे पक्षी उसीका है। दूसरी तरफ सिद्धार्थ की दया और शरणागत धर्म था। वे क्या करें ? उन्होंने अपने मंत्रियों की तरफ देखा। सभी चुप थे। महाराज ने पूछा, "आप लोग इसके विषय में क्या विचार कर रहे हैं ?"

मंत्रीगण चुप थे। वे क्या बोलें ? आज तक उन्होंने ऐसा न्याय कभी किया भी न था। उनकी बुद्धि कहती थी कि देवदत्त जो कह रहा है वह ठीक है। लेकिन उनका हृदय कह रहा था कि सिद्धार्थ जो कह रहा है वह ठीक है। फिर क्या किया जाए ? सभी शान्त। महाराज भी शान्त। कोई उपाय ही न सूझता था। उन्होंने उन दोनों को समझाना

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

चाहा, परन्तु दोनों अपनी बातों पर डटे थे। देवदत्त को अपने न्यायपूर्ण पक्ष पर विश्वास था। वह तो बिलकुल अडिग था। उसने पक्षी को मारा था, फिर वह भला क्यों पीछे हटे ?

महाराज ने अपने एक-एक मंत्री से पूछा, "भाई, कोई तो कुछ रास्ता बताओ। मेरी तो समझ में ही कुछ नहीं आता कि पक्षी किसका है। दोनों ही की बातें अपनी जगह पर इतनी उचित हैं कि इनके न्याय में मुझे अन्याय का भय है!" राजदरबार में शांति थी। सब एक-दूसरे का मुंह देख रहे थे। सहसा एक मंत्री आगे बढ़ा। उसने कहा, "महाराज, आज्ञा हो तो कुछ निवेदन करूं।"

महाराज को तो जैसे डूबते को पत्ते का सहारा मिल गया हो। उन्होंने कहा, "हां, हां, निःसंकोच कहो!"

मंत्री ने कहा, "महाराज, पक्षी मरा नहीं है। वह अभी ज़िन्दा है। वह घायल अवस्था में पड़ा है। यदि वह मर गया होता तब तो उसके मरे हुए शरीर के विषय में हम चाहे जो न्याय कर सकते थे। किन्तु ज़िन्दा व्यक्ति को अपना न्याय स्वयं करना चाहिए। पक्षी किसके साथ रहे, किसका होकर रहे, इसका निर्णय करने का अधिकार स्वयं पक्षी को है, हमें नहीं।"

महाराज ने कहा, "मंत्रीजी, आप तो कवियों की

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

तरह कल्पना करने लगे। आपकी बातें तो ठीक हैं। अगर पक्षी बोल सकता कि वह किसके साथ रहेगा तब तो कोई सवाल ही नहीं उठता। लेकिन उस पक्षी से यह कौन पूछेगा और पूछने पर भला वह इस सवाल का जवाब क्योंकर देने लगा ?"

"महाराज, यह तो सीधी-सी बात है। पक्षी को राजसभा में उपस्थित किया जाए। देवदत्त और सिद्धार्थ दोनों ही उसे बारी-बारी से बुलाएं। वह जिसके पास चला जाए पक्षी उसीका समझा जाए।"

मंत्री की इस बात से महाराज को संतोष हुआ। उन्होंने कहा, "अवश्य ऐसा ही किया जाए।"

पक्षी दरबार में लाया गया। पहले देवदत्त को आज्ञा हुई कि वह पक्षी को बुलाए। देवदत्त ने पक्षी की तरफ देखा। उसे बुलाने लगा। पक्षी ने आंखें फेर लीं। जैसे वह उसका मुंह तक न देखना चाहता हो। देवदत्त ने तालियां बजाईं। पक्षी भय से कांपने लगा। वह डरकर संकुचित हो गया। देवदत्त उसे बुलाता जाता था, परन्तु पक्षी ने उसकी तरफ देखा तक नहीं। देवदत्त नाराज़ हो गया। उसने कहा, "महाराज, यह जंगली पक्षी भला आदमी की बातें क्या समझेगा ? मंत्री ने आपको गलत सलाह दी है। सिद्धार्थ ही बुलाकर देखें। यह नासमझ पक्षी हमें क्या

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

पहचानेगा ?"

महाराज ने कहा, "ठहरो देवदत्त! इसमें क्रोधित होने की क्या बात है! सिद्धार्थ, अब तुम चलो।"

सिद्धार्थ ने सामने आकर मीठी आवाज़ में पक्षी को बुलाया। पक्षी ने मुड़कर देखा। उसने पंख फड़फड़ा उठे। सिद्धार्थ ने उसे अपने पास आने का संकेत करते हुए तालियां बजाईं। पक्षी फुदक उठा। वह एक झटके में हिम्मत करके उड़ा और सिद्धार्थ की गोद में आ गिरा।

लोगों ने हर्ष से तालियां बजाईं। पक्षी सिद्धार्थ के मुख की तरफ करुण आंखों से देख रहा था और सिद्धार्थ उसपर प्यार से हाथ फेर रहे थे। देवदत्त शर्म से नीचे देख रहा था।

महाराज ने कहा, "देवदत्त, पक्षी ने स्वयं अपना न्याय कर लिया। संसार में प्रेम का शासन ही न्याय का शासन है। जहां प्रेम है वहीं अधिकार है, वहीं न्याय है।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

प्रेम का मूल्य

* * * * * *

सर आइज़क न्यूटन सारे यूरोप में मशहूर हो चुके थे। लोग उनका नाम बड़ी इज़्ज़त के साथ लेते थे। उन्होंने प्रकाश की गति का पता लगाया। संसार को नया ज्ञान दिया। पृथ्वी की आकर्षण-शक्ति का पता लगाकर विज्ञान की नई खोज की। देश-विदेश से लोग उनके दर्शन के लिए आने लगे। उनके सिद्धान्तों का प्रचार आदर के साथ होने लगा। शिष्यों का समूह उमड़ा पड़ता था। धन, प्रतिष्ठा और कीर्ति उनके पैर चूमने लगी।

इंगलैंड की सरकार ने उन्हें 'सर' की उपाधि दी। वे पार्लियामेंट के सदस्य भी बनाए गए। इस प्रकार उनका जीवन सुख और प्रतिष्ठा से बीतने लगा। परन्तु उन्हें इन सबका ज़रा भी ध्यान न था। वे तो संसार में कुछ कर दिखाने आए थे। मान का अभिमान, ज्ञान और धन का नशा महा-पुरुषों को नहीं गिरा सकता। सर न्यूटन का ज्ञान हिमालय

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

जैसा बड़ा था, किन्तु उनका हृदय गंगाजल जैसा पवित्र और विशाल था।

वे एक बहुत बड़ा आविष्कार करना चाहते थे। रोज़ दिन-रात चिन्ता में डूबे रहते थे। न खाने की चिन्ता न सोने का ध्यान! कभी-कभी रात-भर पढ़ते रह जाते। किताबों के पढ़ने में वे इतने मग्न हो जाते कि उन्हें समय का भी ध्यान नहीं रहता। जो कुछ सोचते उसे लिखते जाते। इस समय कुत्ता ही उनका एकमात्र साथी था। वह कुत्ता उनके पैरों के पास पड़ा रहकर चुपचाप उनकी ओर देखता रहता था। कभी-कभी धीरे से अपना सिर उनके पैरों पर डाल देता और प्यार से आंखें बन्द कर लेता। सर न्यूटन भी उसके शरीर पर प्रेम से हाथ फिराते और उसे प्यार से पुचकारते। कितना महान हृदय था।

बीस वर्ष बीत गए। सर न्यूटन ने अब तक अपने उस महान आविष्कार के विषय में बहुत कुछ लिखा और पढ़ा। उनका परिश्रम अब शीघ्र पूरा होनेवाला था। बस, दो-चार महीनों में ही संसार को एक नया ज्ञान मिलने वाला था। वे इससे कितने प्रसन्न थे। अब सफलता दूर नहीं थी। उनके बीस वर्षों की मेहनत पूर्ण होनेवाली थी। इस समय उन्होंने और अधिक श्रम करना शुरू किया।

रात हो गई थी। सारा संसार सो गया था। चारों

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

तरफ घनघोर अन्धकार छाया था। सर न्यूटन के कमरे में मोमबत्ती जल रही थी। वे कुर्सी पर ध्यानमग्न बैठे थे। सामने टेबल पर कुछ कागज़ पड़े थे। इन कागज़ों में ही उनकी आशा थी और बीस वर्षों की कठिन तपस्या से उत्पन्न वही ज्योति जिससे सारा संसार एक दिन प्रकाशित होनेवाला था। ये कागज़ उनके प्राण थे। वे कभी-कभी इनके पन्नों को इधर-उधर उलटते, कभी पेन्सिल से निशान लगाते और कभी रुक-कर सोचने लगते। फिर कुछ लिख देते। पास ही उनका कुत्ता डायमंड लेटा था। रात बीतती गई। डायमंड भी सो गया, परन्तु सर न्यूटन को नींद कहां!

वे सोचते-सोचते उठे। कमरे में टहलने लगे। थोड़ी देर बाद उठकर बाहर आए। ठंडी हवा थी, वातावरण शांत था। वे धीरे-धीरे घूमते जाते और सोचते जाते।

डायमंड भी उठा। इधर-उधर देखा और मालिक को न पाया। वह टेबल पर झपटा। मोमबत्ती गिर पड़ी। कागज़ जलने लगे। धीरे-धीरे आग का प्रकाश कमरे में फैल गया। सर न्यूटन का ध्यान एकाएक कमरे की तरफ गया। वे झपटकर कमरे में आए। देखकर स्तब्ध हो गए। कागज़ जलकर राख हो गए थे। उनके हृदय में भी आग-सी लग गई। मुंह से शब्द भी नहीं निकलते थे। दिल टूट गया। बीस वर्षों का श्रम, जीवन की आशा-स्वरूप उनका आविष्कार

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

उन कागज़ों में जल गया, जलकर राख हो गया। वे कितने दुःखी थे !

वे धीरे-धीरे आगे बढ़े। पैर कांप रहे थे। दिमाग चक्कर काट रहा था। टेबल पर हाथ रखा। हाय, एक भी टुकड़ा शेष न था। हाथ में बीस वर्षों के ज्ञान की राख आई और कुछ भी नहीं। वे धम्म से कुर्सी पर गिर पड़े। उस राख को गले लगाया और सीने से लगाकर स्तब्ध हो गए। भाग्य भी कितना कठोर और निर्मम था !

डायमंड पास ही पूंछ हिलाता हुआ अपराधी की भांति खड़ा था। मालिक की दशा देखकर वह समझ गया कि उससे बहुत बड़ी गलती हुई है। इसीलिए वह सिर नीचा किए हुए करुणा-विह्वल नेत्रों से ज़मीन की तरफ देखने लगा। सर आइज़क ने आंखें खोलीं। सामने अपराधी कुत्ते को देखा। इसीने उनके जीवन की आशा तोड़ डाली। इसीने उनके ज्ञान को जला डाला। क्षण-भर के लिए आंखें लाल हो गईं। चेहरा क्रोध से तमतमा उठा। कुत्ते को ध्यान से देखा। वह अपराधी की तरह खड़ा था। वे रो उठे। कुत्ते को गले से लगाकर उन्होंने रोते हुए कहा, "डायमंड, प्यारे डायमंड, तूने यह क्या किया ?" कुत्ते ने शर्म से सिर झुका लिया। वह चुप था। सर आइज़क ने कहा, "लेकिन तेरा अपराध ही क्या है ! डायमंड, तू अबोध है। जा, मैं तुझे क्षमा करता

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

हूं।" इतना कहते हुए उन्होंने एक बार फिर डायमंड को गले से लगा लिया।

सर न्यूटन का वह आविष्कार तो न हो सका, लेकिन इस त्याग से उन्होंने प्रेम का जो आदर्श उपस्थित किया वह महान है। यदि कोई हमारा थोड़ा भी नुकसान कर देता है तो हम चिढ़ जाते हैं, बदला लेने की सोचते हैं। सर आइज़क का यह त्याग ऐसे अवसर पर हमें अपराधियों से भी प्रेम करना सिखाता है।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

बलिदान

* * * * * *

शाही सेना को अन्त में विजय मिली। गुरु बन्दा बन्दी बना लिए गए। उनके सात सौ सैनिक पकड़े गए। उन्हें चारों तरफ से कसकर बांध दिया गया। इन कैदियों का काफिला चला। जो सुनता वह रास्ते से हट जाता। शाही सेना विजय करके लौट रही थी, फिर किसको जान से नफरत थी कि सामने आए। चारों तरफ से कड़ा पहरा था। रस्सी से कसे हुए वीर सैनिकों के चेहरे पर भय का कोई चिह्न न था। उन्हें गर्व था कि वे अपने गुरु के लिए बलिदान हो रहे हैं। दिल्ली शहर आया। बादशाह की सेना ने आनन्द के साथ नगर में प्रवेश किया। बादशाह के अभिमान का ठिकाना न रहा। उन्होंने उन बन्दियों को कत्ल करने का हुक्म दिया।

रोज़ सुबह सौ कैदी सिपाही बीच चौराहे पर खड़े किए जाते थे। उनके हाथ-पैर बंधे होते थे। जल्लाद नंगी तलवारें लेकर खड़े हो जाते थे। इस दृश्य को देखकर भला कौन भय

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

से कांप न उठता ! हुक्म होता—तैयार हो जाओ काफिरो ! मरने के लिए तैयार हो जाओ ! तलवारें चमक उठती थीं। वे वीर कैदी 'गुरु की जय' बोलकर गर्दन सीधी करके खड़े हो जाते थे। उनमें न तो कायरता थी, न भय। तलवारें हवा में चमचमातीं और सिर ज़मीन पर गेंद की तरह उछलने लगते। खून से पृथ्वी लथपथ हो गई थी। कैसा भीषण दृश्य था! फिर भी सैनिक पीछे नहीं हटते थे। उन्हें मरने में मज़ा आता था। गर्व था कि अपने धर्म की रक्षा के लिए वे बलिदान हो रहे हैं।

योंही रोज़ उन वीरों का कत्ल हो रहा था। इसी समय एक बुढ़िया रोती हुई बादशाह के दरबार में आई। उस शाही दरबार में बुढ़िया कैसे जा सके! वह खड़ी हो गई और खूब रोई। रोना सुनकर एक सरदार को दया आई। उसने बादशाह के सामने बुढ़िया को पेश किया। बुढ़िया पछाड़ खाकर गिर पड़ी। वह बोली, "हे गरीबपरवर, मेरी रक्षा करो। जहांपनाह, मुझे बचाओ।" बादशाह ने गंभीर स्वर में कहा, "तुम क्या चाहती हो ? साफ-साफ अर्ज़ करो।"

बुढ़िया ने रोते हुए कहा, "महाराज, मेरे लड़के को आपके सिपाहियों ने बन्दी बना रखा है। वह कल काट दिया जाएगा। महाराज, मेरे बेटे को बचाओ। मेरी गोद की रक्षा करो।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

"लेकिन वह बागी है। हम उसे माफ नहीं कर सकते।" बादशाह ने गरजते हुए स्वर में कहा।

"नहीं हुज़ूर, वह बागी नहीं है। मेरा लाल बागी नहीं है। वह तो अपने खेत में काम कर रहा था। आपके सैनिकों ने उसे भूल से पकड़ लिया। हुज़ूर, मेरे लाल को छोड़ दो। वह बागी नहीं है। नहीं है महाराज।" इतना कहते-कहते बुढ़िया बादशाह के पैरों पर गिर पड़ी। बादशाह को दया आई। उसे बुढ़िया की बातों पर विश्वास हो गया और उसने उसके पुत्र को मुक्त करने का आज्ञापत्र लिख दिया।

सवेरा हुआ। आज भी सौ सैनिक खड़े किए गए। उसी उत्साह, उसी वीरता के साथ वे मुस्कराते हुए खड़े थे। न उन्हें मरने का शोक था, न तलवार का भय। एकाएक एक सैनिक के बन्धन को ढीला करते हुए एक शाही सिपाही ने कहा, "जाओ, तुम मुक्त किए जाते हो। बादशाह ने तुम्हें माफ कर दिया है।"

"मुझे! क्यों?"

"हां, तुम्हारी मां ने बताया कि तुम भूल से पकड़े गए हो। वह देखो तुम्हारी मां सामने खड़ी है।" सैनिक ने एक तरफ इशारा करते हुए कहा।

बुढ़िया आगे बढ़ गई—"हाय मेरे लाल! भगवान ने तुझे बचाया मेरे बेटे! आ जा, तुझे गले से लगा लूं।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

बुढ़िया ने पुत्र की ओर झपटकर हाथ बढ़ाया। लेकिन उस सैनिक ने उसे रोका। कहा, "ठहरो! तुमने झूठ बोल-कर पाप किया। पुत्र के प्राण तुम्हें प्यारे हैं, लेकिन सत्य नहीं प्यारा। मां, मां, तुमने यह क्या किया?"

इतना कहते हुए सैनिक रो पड़ा। फिर थोड़ा रुककर उसने ज़ोर से कहा, "आह! इन लोगों ने हमारे ऊपर अत्याचार किया, हमारा धर्म लेना चाहा, हमारे गुरु को बांधा। हमने इनका विरोध किया। इन पापियों से मैं प्राणों की भीख भला मांग सकता हूं! नहीं, नहीं, ऐसा नहीं हो सकता। चली जाओ यहां से। मैं आज बलिदान देकर धरती मां की गोद में सोऊंगा और तुम्हारी गोद को धन्य करूंगा।"

उस वीर ने देखा, एक जल्लाद दूसरे सिपाही पर तलवार चला रहा है। वह झपटकर आगे आ गया। बोला, "वाह गुरुजी का खालसा, वाह गुरुजी की फतह!" तलवार उसकी गरदन के पार हो गई। उसका सिर ज़ोर से उछलकर धरती मां की गोद में आ गिरा। कटकर अलग हो जाने पर भी उसके चेहरे पर चमक थी और थी अपूर्व मुस्कान!

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

सच्ची सेवा

* * * * * *

जब से छत्रसाल ने शिवाजी महाराज को देखा था तभी से उसका हृदय उनकी तरफ आकर्षित हो गया था। शिवाजी के रोबीले चेहरे और चमकती आंखों ने उसपर जादू डाल दिया था। वह राजा मिरज़ा जयसिंह की सेना में था। यहां उसे सब कुछ प्राप्त था। सम्मान था, धन था, लेकिन उसे यह सब अच्छा नहीं लगता था। वह मुगलों का गुलाम था। इनकी नौकरी में उसे ऐसे लोगों से भी लड़ना पड़ता था जिनसे वह लड़ना नहीं चाहता था। अपने भाइयों से लड़कर राजा का राज्य बढ़ाना पड़ता था। यह बात उसके मन में एक तरह का दुःख पैदा करती थी। लेकिन वह क्या करे ? कहां जाए ? जीवन बिताने के लिए कोई न कोई सहारा तो चाहिए ही।

कई दिनों तक उसे नींद न आई। शिवाजी के पास जाने की इच्छा उसके मन में बढ़ती जाती थी। वह सोचता—

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

चलो, अभी चलूं। लेकिन मन में एक शंका आती। फिर सोचता—मैं मुगल-सेना में रह चुका हूं। क्या शिवाजी मेरे ऊपर विश्वास करेंगे ? इसी तरह सोच-विचार में कई दिन बीत गए। अन्त में शिवाजी के पास चल देने का उसने निश्चय किया। वहां पहुंचते ही किले के पहरेदारों ने उसे रोक दिया। उन दिनों हर समय लड़ाई का डर था। शिवाजी से मुगल सम्राट औरंगज़ेब की दुश्मनी थी। वह उनके खून का प्यासा था। इसीलिए शिवाजी हर समय चौकन्ना रहते थे। बिना आज्ञा कोई उनसे मिल नहीं सकता था।

शिवाजी के कर्मचारियों ने मिलने का कारण पूछा। छत्रसाल ने कोई निश्चित जवाब नहीं दिया। कर्मचारियों ने रोक दिया। बात बढ़ गई। छत्रसाल तो वीर राजपूत था। वह कब शान्त रहता! झगड़ा बढ़ गया। इसी बीच शिवाजी बाहर निकल आए। उन्होंने सबको शान्त किया। आने-वाले व्यक्ति को ध्यान से देखा। छत्रसाल के सुन्दर लम्बे-चौड़े शरीर को देखकर वे प्रभावित हो गए। उन्होंने उसे राज-दरबार में आदरपूर्वक बुलाया। शिवाजी ने उस व्यक्ति से पूछा, "हे वीर! तुम यहां किसलिए आए हो ?"

"महाराज, मैं मुगल-सेना में राजा मिरज़ा जयसिंह के पास काम करता था। अपने ही हाथ से अपने भाइयों का खून बहाता था। अपने ही भाइयों से लड़कर, उन्हें लूटकर

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

अत्याचारी राजा का खज़ाना भरता था। लेकिन जब से मैंने आपको देखा, मेरा मन मुझे कोसने लगा। मुझे अपने ऊपर बड़ी ग्लानि हुई। अब मैं आपकी सेवा में आया हूं। आप जैसे देशभक्त की सेवा करने की मेरी इच्छा है। महाराज, मुझे शरण दीजिए और किए गए विश्वासघातों को भुला दीजिए।"

शिवाजी पर इस वीर की वीरता का असर पहली ही दृष्टि में पड़ गया था। उसकी बातों को सुनकर उनका हृदय दया-मिश्रित प्रसन्नता से भर गया। इस वीर के लिए उनके मन में ज़रा भी शंका न थी। ऐसा वीर पाकर उन्हें वास्तव में प्रसन्नता थी। परन्तु सेना में रखने के लिए उसके विषय में पूरी तरह जान लेना आवश्यक था ही; उन्होंने पूछा, "हे वीर, तुम्हारी जन्मभूमि कहां है ?"

उत्तर मिला, "बुन्देलखण्ड।"

"बुन्देलखण्ड ! तो क्या तुम महाराज चंपतराय के विषय में कुछ जानते हो? उनके कुटुम्ब में अब कोई है या नहीं ?" शिवाजी ने पूछा।

वीर युवक चुप हो गया। वह शान्त खड़ा रहा।

शिवाजी ने कहा, "तुम बोलते क्यों नहीं ? चुप क्यों हो गए ?" वह युवक फिर भी चुप था। शिवाजी ने देखा, उसकी आंखें आंसुओं से भर गई हैं। वे सिंहासन से उठ

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

आए। उस वीर के कन्धों पर हाथ रखकर उन्होंने पूछा, "तो क्या तुम महाराज चंपतराय के पुत्र हो?"

उस नौजवान ने दुःख-भरी आवाज़ में कहा, "हां महाराज, मैं ही चंपतराय का पुत्र छत्रसाल हूं। दुश्मनों की गुलामी करके अपवित्र हो गया हूं। अब मुझे शरण दें। आप

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

अपनी सेवा का मौका दें।"

शिवाजी पास आकर खड़े हो गए। एक क्षण चुप रहने के बाद उन्होंने कहा, "नौकरी ! सेवा ! चंपतराय का पुत्र नौकरी करेगा ! छत्रसाल, तुम एक वीर पिता के पुत्र हो। तुम्हारी मां एक वीर नारी थी। अहा, मुझे उनके वे वाक्य कितने अच्छे लगते हैं ! एक बार चंपतराय जंगल में सोए थे। इसी समय कुछ लोग उधर से आते दिखाई दिए। रानी ने तलवार खींच ली। उन्होंने कड़ककर कहा—'खबरदार, वहीं खड़े रहो। तुम संख्या में अधिक हो तो क्या ! यह मत समझना कि मेरे पति किले से बाहर हैं। मैं ही उनका किला हूं। मेरे टुकडे-टुकड़े हो जाने के बाद ही तुम इनका कुछ बिगाड़ सकते हो।' अहा ! वे कितनी वीर नारी थीं ! उनकी इन बातों का ख्याल करता हूं तो मेरा मन उत्साह से भर जाता है। छत्रसाल, तुम उसी वीर माता के पुत्र हो। तुम्हारे पिता ने एक-एक बूंद खून बहाकर भी अपनी आज़ादी न छोड़ी और तुम नौकरी करोगे !"

छत्रसाल के मन में एक अजीब-सी शक्ति आ गई। दिल में जोश आ गया और उसका हाथ तलवार पर जा पड़ा। दरबार के सभी लोग घबरा उठे। परन्तु शिवाजी मुस्कराते हुए और पास आ गए। छत्रसाल की पीठ पर हाथ फेरते हुए उन्होंने कहा, "शाबाश वीर, तुमसे यही आशा थी। तुम वीर-पुत्र

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

हो। सेवा करनी हो तो अपनी जन्मभूमि की सेवा करो। मनुष्य की नौकरी करना तुम्हें शोभा नहीं देता। मेरे तीस हज़ार सैनिक तुम्हारे हैं। जब ज़रूरत होगी, शिवा तुम्हारे काम में सहायता देने आ जाएगा।"

छत्रसाल नम्र होकर झुक गया। उसने कहा, "महाराज, आपने मुझे सोते से जगा दिया। मैं अपने पिता के राज्य की रक्षा करूंगा।" इतना कहते ही वह शिवाजी को प्रणाम करके चल दिया। बाद में बुन्देलखण्ड पहुंचकर उसने ऐसी वीरता दिखाई कि लोग सुनकर आश्चर्य में पड़ गए। उसने अपना राज्य प्राप्त किया। अब वह अपनी जन्मभूमि का सच्चा सेवक बन गया।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

पतन का रास्ता

* * * * * *

महारानी अहल्याबाई के हृदय से पति की मृत्यु का शोक अभी गया भी न था कि उनके पुत्र मालेराव ने भी संसार से विदा ली। बेचारी अहल्याबाई का दिल टूक-टूक हो गया। अब चारों तरफ निराशा ही निराशा नज़र आती थी। दुःख में कायर पुरुष डरकर रोते हैं, लेकिन वीरों के लिए तो दुःख ही जीवन की सच्ची परीक्षा है। सोना आग में तपकर शुद्ध हो जाता है। हीरा घिसकर चमक पाता है और वीर दुःख में खिल उठता है। अहल्याबाई का चरित्र इस कष्ट में चमक उठा। उन्होंने अपने राज्य को संभाला। उन्हें प्रजा की रक्षा करनी थी और पति का गौरव कायम रखना था।

वे दिन-रात काम किया करतीं। वे राज्य के हर कागज़ को स्वयं देखती थीं। सभी पत्रों का जवाब स्वयं लिखती या लिखवाती थीं। प्रजा के सुख-दुःख का ख्याल उनके दिल

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

में हमेशा रहता था। महाराष्ट्र के सभी लोग उनका सम्मान करते थे। उनके राज्य से चोरों और डाकुओं का सफाया हो चुका था। उनकी कठोर आज्ञा से सभी डरते थे और उनके कोमल हृदय से सभी उनका संरक्षण पाते थे। धर्म की रक्षा तथा प्रजा की भलाई के लिए उन्होंने दिल खोलकर धन दिया।

इस समय उनके परिवार में उनकी एकमात्र पुत्री मुक्ता-बाई थी। इसीको देखकर वे अपना दुःखमय जीवन बिताती थीं। दान, धर्म, प्रजापालन तथा अपनी बच्ची से प्रेम करके वे सोचतीं कि उनके पति की आत्मा को शान्ति मिलती होगी। उनके पास जो कोई आता वह खाली न लौटता। उनका हृदय विशाल था। अपनी बेटी मुक्ताबाई को तो वे प्राणों से भी ज़्यादा प्यार करती थीं। उसीको देखकर अब वे जी रही थीं। कर्तव्य-पालन और मुक्ताबाई का प्रेम यही दो बातें उनके जीवन के लिए सहारा थीं।

भगवान से यह भी देखा न गया। अब उनका अन्तिम सहारा भी छिन गया। मुक्ताबाई ने भी संसार से विदा ली। मुक्ताबाई की मृत्यु के बाद अहल्याबाई का हृदय अशांत हो गया। वे रात-दिन दुःखी अवस्था में पड़ी रहती थीं। न खाने की फिकर, न पहनने की चिन्ता। दिन-रात पुत्री का शोक उन्हें सताता था। कुछ दिन योंही चला।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

मनुष्य अपने दुःख को भुलाने का कोई न कोई उपाय करता ही है। दुःख देना भगवान के हाथ में है। हमें तो उसे सहना और फिर भूलना ही पड़ता है। पुत्री की याद में अहल्याबाई ने नर्मदा नदी के किनारे पर एक सुन्दर मन्दिर बनवाना शुरू किया। मन्दिर बनता जाता था और उनका मन सन्तोष पाता जाता था। धीरे-धीरे उनके मन को शांति मिल रही थी। मन्दिर के पास रोज़ गरीबों को दान दिया ज़ाता था।

बड़े कुशल कारीगर काम कर रहे थे। पत्थर के एक-एक टुकड़े को वे ध्यान से लगाते और फूल-पत्तियों की नक्काशी करते जाते थे। इस मन्दिर की ख्याति दूर-दूर तक फैल गई। लोग दूर-दूर से आने लगे। किसीने इतना सुन्दर मन्दिर न देखा था। ब्राह्मणों का तो तांता लगा रहता। वे खूब दान पाते और सन्तुष्ट हो जाते। मन्दिर ने अहल्याबाई की कीर्ति को चारों तरफ फैला दिया। उनके यश में और अधिक वृद्धि हो गई।

इधर अहल्याबाई ने राज्य के काम में भी फिर से मन लगाना शुरू किया। अनाथ प्रजा सनाथ हो गई। अपनी महारानी के दुःख से सभी दुःखी थे। उन्हें शान्तचित्त देखकर सबको सन्तोष हो गया। अहल्याबाई ने राज्य-प्रबन्ध और ज़ोर से करना शुरू किया। प्रजा के हर मनुष्य में उन्हें अपना

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

पुत्र और हर नारी के रूप में अपनी पुत्री दिखाई देती। इसीलिए वे सबको खूब प्यार करतीं। सबके दुःख-सुख का ध्यान रखतीं और प्रजा-पालन में लगी रहतीं। सभी उनकी प्रशंसा करते। लेकिन उन्हें अपनी प्रशंसा के शब्द सुनना ज़रा भी पसंद नहीं था। मन्दिर के बनने से उन्हें सन्तोष ज़रूर मिलता था। लेकिन इस विशाल मन्दिर के बनवाने की वजह से उनके मन में अभिमान नहीं था।

धीरे-धीरे वह मन्दिर पूरा हुआ। चारों ओर यह खबर फैल गई। महारानी स्वयं मन्दिर के द्वार पर आईं। वे उसकी एक-एक चित्रकारी और कला को देखतीं और प्रसन्न होतीं। अपनी प्यारी पुत्री की याद में उन्होंने इतना सुन्दर और भव्य मन्दिर बनवाया था, यही क्या उनके लिए कम था। उस दिन खूब उत्सव हुआ। सबने मिलकर आनन्द मनाया। उत्सव समाप्त हुआ। लोग अपने-अपने घर गए।

शाम का समय था। महारानी किनारे पर बैठकर नर्मदा के पवित्र जल को देख रही थीं। उन्हें अपने बीते जीवन की याद आ रही थी। इसी समय सेवक ने खबर दी, "महारानीजी, एक विद्वान कवि आपके दर्शन करना चाहते हैं।" रानी ने आज्ञा दी, "उन्हें सत्कार से ले आओ।"

कवि का सुन्दर मुख विद्वत्ता की आभा से दमक रहा था। उनके हाथ में एक पुस्तक थी। रानी ने उन्हें प्रणाम

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

किया। कवि ने आशीर्वाद देकर पुस्तक खोली और सुन्दर राग में उसे पढ़ना शुरू किया। रानी की प्रशंसा में यह पुस्तक लिखी गई थी। उसमें उनके गुणों का वर्णन किया गया था। आह! कितने मीठे थे वे पद्य!

दूसरा कोई राजा होता तो सुनकर आनंदित हो जाता, परन्तु यह क्या! रानी के चेहरे पर शोक छा गया। उनका मस्तक झुक गया। उन्होंने पंडित को चुप रहने का संकेत किया। थोड़ी देर चुप रहकर उन्होंने कहा, "ब्राह्मणदेव! यह पुस्तक नर्मदा के पवित्र जल में फेंक दीजिए। मैंने आज तक जो कुछ किया है वह मेरा कर्तव्य था। प्रजा राजा की सन्तान है। सन्तान का पालन करना माता-पिता का धर्म है। इसमें बड़ाई की कौन-सी बात है! और यह मन्दिर। यह तो मेरे दुःखी मन को भुलाने का साधन है। इसमें महानता की कौन-सी बात है! महाराज, कविता के द्वारा भगवान का गुणगान कीजिए। मनुष्य की बड़ाई से क्या लाभ! प्रशंसा कराने की इच्छा ही पतन का रास्ता है। इसीसे अभिमान बढ़ता है और अभिमान से मनुष्य का विनाश होता है। कृपया मुझे पतन का यह मार्ग मत दिखाइए।"

ब्राह्मणदेव ने लज्जा से सिर झुका लिया और वह पुस्तक उनके हाथों से गिर पड़ी।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

न्याय

* * * * * *

गुजरात के राजा कर्णदेव की मृत्यु हो गई थी। उनकी पत्नी मीनलदेवी एक पवित्र नारी थीं। पति की मृत्यु से उनका दिल दुःखी हो गया। कुछ दिनों तक वे खूब रोती रहीं, लेकिन उनका पुत्र सिद्धराज अभी तीन ही वर्ष का था। पुत्र को पढ़ाने-लिखाने, योग्य बनाने का और राज्य का काम देखने का भार बेचारी रानी के ऊपर आ गया। जिन्होंने शांति और आराम से जीवन बिताया था उन्हींके ऊपर इतना बड़ा बोझ! लेकिन रानी मीनलदेवी ने इस मुसीबत में भी अपना धैर्य न छोड़ा। मंत्रियों की सलाह से वे राज-काज चलाने लगीं।

राजा कर्णदेव की मृत्यु से कितने ही दुश्मन प्रसन्न थे। वे सोचते थे कि विधवा रानी और तीन वर्ष के बच्चे से क्या राज चलेगा! शीघ्र ही प्रजा में अशान्ति फैलेगी और वे वहां अपना अधिकार जमा लेंगे। लेकिन रानी के प्रबन्ध से

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

इतनी शान्ति और सुव्यवस्था स्थापित हुई कि दुश्मनों की आशाओं पर पानी फिर गया। सेना में सुन्दर प्रबन्ध था, प्रजा में शान्ति थी, सभी लोग आराम से खाते-पीते और रहते। न कहीं चोरी का भय था, न कहीं दुष्टों या बदमाशों का डर। रानी के प्रति प्रजा अत्यन्त आदर और प्रेम रखती। लोग अपनी पवित्र रानी के लिए और अपने तीन वर्ष के छोटे राजकुमार के लिए बलिदान हो जाने के लिए सदा तैयार रहते।

रानी मीनलदेवी अपनी प्रजा को अपना पुत्र समझती थीं। वे हमेशा कहा करती थीं कि ये लोग मेरे बच्चे हैं। न्याय के लिए रानी सदा तैयार रहतीं। उन्होंने एक बार एक बहुत बड़ा तालाब बनवाना शुरू किया। इस तालाब के लिए रानी ने काफी धन का प्रबन्ध किया। इस तालाब को बनवाकर वे अपनी और अपने पति की कीर्ति को अमर करना चाहती थीं। तालाब की सारी योजना बन गई। उसके लिए विस्तृत ज़मीन ठीक की गई। इस सरोवर का नाम मलाव-सरोवर रखा गया। अब काम शुरू हुआ। इस विशाल सरोवर की ज़मीन के एक कोने में एक बुढ़िया का छोटा-सा घर था। बिना इस घर को गिराए तालाब सीधा नहीं बन सकता था। राजकर्मचारियों ने बुढ़िया से उसका घर मांगा।

बुढ़िया ने कहा, "मैं अपना घर नहीं छोड़ूंगी। यह

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

मेरे पति का प्यारा घर है । चाहे जो हो जाए, मैं इसे न छोड़ूंगी ।"

राजकर्मचारियों ने पहले तो उसे डराया-धमकाया, फिर बहुत पैसा देने के लिए कहा । फिर भी बुढ़िया राज़ी न हुई । अब यह बात रानी मीनलदेवी के पास पहुंची । बुढ़िया ने न्याय की फरियाद की । रानी ने सारी बातें सुनीं । अन्त में उन्होंने कहा, "बिना बुढ़िया की इच्छा के उसका घर लेना न्याय नहीं है । मुझे अपना सरोवर प्यारा है तो उसे अपना घर प्यारा है । यदि वह स्वेच्छा से अपना घर नहीं देती है तो उसके साथ ज़बरदस्ती करना अन्याय है । हमारे राज्य में प्रजा की इच्छा का राजा की इच्छा से कम महत्त्व नहीं है । हम ऐसा अन्याय कैसे कर सकते हैं ! बुढ़िया का घर छोड़कर सरोवर को टेढ़ा बनाओ ।"

लोग रानी का न्याय सुनकर अवाक् हो गए ।

रानी ने अपने पुत्र को पढ़ा-लिखाकर बड़ा बनाया । उन्होंने सिद्धराज को भी न्यायप्रिय बनने की शिक्षा दी । सिद्धराज बड़ा हुआ । रानी ने पुत्र को राज सौंप दिया । सिद्धराज ने भी अपनी मां की शिक्षा का पूर्ण रूप से पालन किया । वह उनसे सलाह लेकर कार्य करता था तथा मां की आज्ञा का पालन करने के लिए सदा तैयार रहता था । मां की आज्ञा से ही महाराज सिद्धराज ने धर्म-स्थानों पर लगनेवाले करों

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

को माफ कर दिया ।

महाराज सिद्धराज के राज्य में खंभात प्रदेश था। वहां थोड़े-से मुसलमान रहते थे । वहां के हिन्दुओं ने एक बार इन मुसलमानों को खूब सताया और लूटा। गांव में इन मुसलमानों का रहना हिन्दुओं को बुरा लगता था। बेचारे मुसलमान दुःखी हो गए। अपना दुःख सुनाने के लिए तथा न्याय की फरियाद के लिए अली नाम का मुसलमान पाटण आया । राजा से मिलने के लिए उसने आज्ञा मांगी ।

राजकर्मचारियों ने उसे महाराज से मिलने न दिया। बेचारा अली बहुत रोया-गिड़गिड़ाया, लेकिन कर्मचारियों ने उसकी एक न सुनी। वह मुसलमान था। हिन्दू कर्मचारी भला उसे कैसे दरबार में आने देते। फिर जब वे उसके ऊपर हुए अत्याचार की बातें सुनते तो मन ही मन खुश होते। एक मुसलमान के प्रति दयाभाव दिखाना 'अच्छा नहीं समझते। यह सब कुछ हो रहा था, लेकिन महाराज सिद्धराज को कुछ भी पता नहीं था। अली निराश न हुआ। वह पाटण में रुका रहा और महाराज से मिलने का मौका ढूंढ़ने लगा। महाराज पर उसे विश्वास था।

अली की इच्छा पूरी हुई। महाराज शिकार को जा रहे थे। रास्ता साफ था। वह महाराज के पैरों पर गिर पड़ा। महाराज ने उसकी बातें सुनीं। अली ने अपनी दुःख-भरी

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

कहानी सुनाई। साथ में कुछ राजकर्मचारी भी थे। इन लोगों ने कहा, "महाराज, यह मुसलमान झूठ बोल रहा है। ऐसा नहीं हो सकता।" महाराज ने अली को पाटण में रुकने के लिए कहा। वे शाम को महल में आए।

सवेरा हुआ। लोगों ने सुना कि महाराज बीमार हैं। मंत्री ने काम-काज चलाना शुरू किया। तीन दिन तक महाराज दरबार में नहीं आए। उन्होंने चुपचाप वेश बदलकर खंभात की ओर प्रस्थान किया और बीमारी की झूठी खबर फैला दी। एक साधारण किसान के वेश में महाराज खंभात पहुंचे। लोगों ने राजा को नहीं पहचाना। उन्होंने वहां जाकर मुसलमानों का जला घर देखा। स्वयं सारी बातों का पता लगाया और चुपचाप पाटण लौट आए। किसीको ज़रा भी खबर न मिली। पाटण से खंभात तक की लम्बी दूरी उन्होंने साँडनी पर तय की।

चौथे दिन दरबार लगा था। राजा अब अच्छे हो गए थे। लोग उनसे मिलने आने लगे। राजा ने राज-काज संभाला। न्याय का समय हुआ। अली को बुलवाया गया। अली ने फिर अपनी कहानी सुनाकर न्याय की मांग की। दरबार में बैठे हुए हिन्दुओं ने इस बात का विरोध किया। उन्होंने कहा, "महाराज, यह मुसलमान झूठ बोल रहा है। भला यह कभी सम्भव है!"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

सभा चुप थी। अली भी चुप था। लेकिन उसकी करुण आंखें राजा की ओर लगी थीं। राजकर्मचारी शान्त थे।

राजा ने गम्भीर स्वर में कहा, "अली मुसलमान है, फिर भी मेरी प्रजा है। मेरी प्रजा में सभी लोग समान हैं। चाहे वे हिन्दू हों या मुसलमान। वह जो कुछ कह रहा है

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

सच कह रहा है।"

हिन्दू दरबारियों ने कहा, "लेकिन महाराज…।"

महाराज सिद्धराज ने और दृढ़ता से कहा, "मैं और कुछ नहीं सुनना चाहता। अली और इसके साथियों का जितना नुकसान हुआ है उसे तुरन्त राज्य के खज़ाने से पूरा किया जाए और खम्भात के हिन्दुओं से एक-एक पाई वसूल की जाए। मैंने इन तीन दिनों में स्वयं खम्भात जाकर वहां की दशा देखी है और सचाई का पता लगा लिया है।"

राजा की खम्भात-यात्रा की बात सुनकर लोग अवाक् हो गए। अली की आंखों से प्रेम और कृतज्ञता के अश्रु छलक उठे।

सभीने मन ही मन कहा—न्यायी हो तो ऐसा हो!

महाराज़ के ऐसे न्याय पर उनकी माता की आत्मा कितनी प्रसन्न हुई होगी, इसकी कल्पना पाठक कर सकते हैं।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

बिदाई

* * * * * *

बिदाई चाहे जैसी भी हो दुःखदायी होती है। लड़की जब मां के घर से जाने लगती है उस समय घर का वातावरण कितना करुण हो जाता है! विद्यार्थी पाठशाला से जब विदा होने लगते हैं उस समय का भी वातावरण कम दुःखदायी नहीं होता। बिदाई के समय सभी बड़े-बूढ़े उपदेश देते हैं, कुछ व्यवहार सिखाते हैं, कुछ गुप्त बातें बताते हैं। बिदाई तो बिदाई है, वह चाहे जिसकी हो, चाहे जिसलिए हो।

प्रभु ईसा के शिष्यों की आज बिदाई थी। आज तक गुरु ने उन्हें खूब सिखाया, पढ़ाया और समझाया। सत्य क्या है, भगवान क्या है, ऐसी न जाने कितनी गंभीर बातें उन्होंने उन्हें बताईं। शिष्य भी कितने जिज्ञासु थे! गुरु की एक-एक बात को उन्होंने सीप के मोती की तरह अपने दिल में उतार लिया था। वे अपने प्यारे गुरु के साथ पुत्र

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

जैसे रहते। गुरु का एक क्षण का भी वियोग उन्हें असह्य था, लेकिन आज उन्हें विदा लेनी थी। जो ज्ञान उन्होंने सीखा था उसका प्रचार करना था। गुरु के काम के लिए ही जाना था। लेकिन बिदाई तो बिदाई है। वे अपने गुरु के पास शांति से बैठे थे। छोटी-सी सभा लगी थी। सभी शांत थे। उनके दिल का अजब हाल था। उनमें उत्साह भी था और दुःख भी। उत्साह इसलिए कि वे गुरु के कार्य के लिए जा रहे थे और दुःख इसलिए कि वे अपने गुरु से अलग हो रहे थे।

महात्मा ईसा शांत थे। धीरे-धीरे उन्होंने बोलना शुरू किया, "प्यारे बच्चो, तुम आज मुझसे विदा हो रहे हो। तुम सत्य का प्रचार करके अपना कर्तव्यपालन करने जा रहे हो। मुझे तुमपर विश्वास है। तुम धर्म के रक्षक हो, सत्य के प्रचारक हो। जाओ, संसार के कल्याण के लिए कर्तव्यपालन करो।"

इतना कहते-कहते गुरु का गला भर आया। वे थोड़ी देर के लिए रुके। चारों तरफ करुणा का वातावरण छा गया।

उन्होंने फिर कहा, "मेरे प्यारे बच्चो, जो कुछ सिखाने योग्य था, मैंने तुम्हें सिखाया; लेकिन आज कुछ और कहूंगा। तुम जाओ लेकिन अपने साथ कुछ भी मत

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

रखना; न सोना, न चांदी, न पीतल। जहां जाना लोगों को ज्ञान देना और भरपेट भोजन कर लेना। संतोष ही तुम्हारा आभूषण है। धन मत इकट्ठा करना। लोगों को सिखाकर मज़दूरी करना और इसके बदले में जो रूखा-सूखा मिले वह खा लेना। तुम्हारे दुश्मन तुम्हारे चारों तरफ खड़े हैं। पाखण्डी लोग तुम्हारा विरोध करेंगे। मैं इनके आगे तुम्हें ठीक उसी तरह भेज रहा हूं जिस तरह कोई अपने बच्चे को भेड़िये के पास भेज दे। इसलिए तुम हिम्मत रखना। सर्प की तरह सावधान और कबूतर जैसे नम्र रहना।" इतना कहते-कहते ईसा फिर रुक गए। लेकिन शिष्यों के चेहरे पर भय नहीं था, उनका हृदय दृढ़ था।

ईसा ने उनकी ओर देखा और फिर बोलना शुरू किया, "दुष्टों से बचना। वे तुम्हें मारेंगे, फटकारेंगे, कष्ट देंगे। शायद तुम्हें राजा के आगे अपराधी के रूप में भी खड़ा होना पड़े, लेकिन इनका विचार अभी से करने की ज़रूरत नहीं है। समय पड़ने पर भगवान तुम्हारी मदद करेगा। वही तुम्हें युक्ति बताएगा और वही तुम्हें रास्ता दिखाएगा। तुम्हें कुछ नहीं करना है, जो भगवान चाहेगा वही करेगा। सत्य के पालन में कठिनाई आती है, विरोध होता है। देखना, शायद तुम्हारे ही भाई तुम्हारा

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

विरोध करें। शायद बाप-बेटों में भी झगड़ा हो जाए। लोग एक-दूसरे को सूली पर चढ़ाएंगे। मेरे लिए और सत्य के लिए तुम्हें भयंकर कष्ट सहने पड़ेंगे। लेकिन जो अपने रास्ते पर स्थिर होकर चलोगे तो तुम्हारा और इस अभागे संसार का ज़रूर उद्धार होगा।"

सारी सभा मौन हो गई। महात्मा ईसा भी क्षण-भर के लिए चुप हो गए। चारों ओर एक पवित्रता फैल गई थी, जैसे सबके सामने प्रकाश फैल गया हो। महात्मा ईसा के चेहरे पर एक अलौकिक प्रकाश चमक रहा था। उन्होंने कहा, "अपना हृदय स्पष्ट रखना। कहीं कुछ छिपाने की ज़रूरत नहीं है। मैंने तुम्हें ऐसा कुछ नहीं बताया है जो छिपाने योग्य हो। सत्य छिपाया नहीं जाता। सत्य बोलने से डरना नहीं। सत्य न बोलने से आत्मा मरती है। शरीर की हानि से डरकर आत्मा की हानि मत करना।

"भगवान की इच्छा के बिना एक पत्ता भी नहीं डोलता। भगवान तुम्हारे एक-एक बाल की रक्षा करनेवाला है। चिन्ता मत करना। ईश्वर को तुम्हारी चिन्ता है।

"हम सिर्फ शान्ति फैलाने ही नहीं आए हैं, हम तो क्रान्ति मचाने आए हैं। हमें सत्य के लिए क्रान्ति करनी है। सत्य की रक्षा के लिए बाप-बेटे, मां-बेटी और भाई-भाई में झगड़ा हो सकता है। विद्रोह हो सकता है। हमारा

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

विरोध वे कर सकते हैं। किन्तु इस सत्य के रास्ते पर चलने के लिए तुम्हें यह सहना होगा। बिना इस क्रांति के शान्ति का जन्म न होगा। जो घर बसाने जाता है उसका घर उजड़ जाता है। जो सत्य की शोध के लिए घर उजाड़ता है, उसीका घर बसता है, वही अमर हो सकता है। तुमपर मेरा विश्वास है। जाओ, मेरे प्यारे बच्चो! सत्य का प्रकाश फैलाओ।"

गुरु ने अन्तिम मंत्र दे दिया। शिष्य उठे। वे गुरु के चरणों से बार-बार लिपटने लगे। दुःख से भरकर गुरु के चरणों पर गिरते और उत्साह से भरकर कर्तव्य की राह पर चल देते।

○ ○ ○

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

25816
Digitized by eGangotri
16

बालोपयोगी जीवनियां

श्रीकृष्ण	०·५०
स्वामी विवेकानन्द	०·५०
स्वामी रामतीर्थ	०·५०
लोकमान्य तिलक	०·५०
महात्मा गांधी	०·५०
लाला लाजपतराय	०·५०
सरदार पटेल	०·५०
डा० राजेन्द्रप्रसाद	०·५०
जवाहरलाल नेहरू	०·५०
गुरु गोविन्दसिंह	०·५०
रवीन्द्रनाथ ठाकुर	०·५०
गौतम बुद्ध	०·५०
विनोबा भावे	०·५०
महाराणा प्रताप	०·५०
सम्राट अशोक	०·५०
सरदार भगतसिंह	०·५०
चन्द्रशेखर आज़ाद	०·५०
गुरु नानकदेव	०·५०
वीर हनुमान	०·५०
श्यामाप्रसाद मुकर्जी	०·५०
सुभाषचन्द्र बोस	०·५०
चाणक्य	०·५०

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE